



वर्ष
१०

गीताप्रेस, गोरखपुर

संख्या
१०



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with

By
Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



महारास-लीला

गंगाधर

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥



कल्याण

ॐ नमः शिवायै गङ्गायै शिवदायै नमो नमः । नमस्ते विष्णुरूपिण्यै ब्रह्ममूर्त्यै नमोऽस्तु ते ॥
नमस्ते रुद्ररूपिण्यै शाङ्कर्यै ते नमो नमः । सर्वदेवस्वरूपिण्यै नमो भेषजमूर्त्यै ॥

वर्ष
१०

गोरखपुर, सौर कार्तिक, वि० सं० २०७३, श्रीकृष्ण-सं० ५२४२, अक्टूबर २०१६ ई०

संख्या
१०

पूर्ण संख्या १०७९

महारास-लीला

आस्वादक आस्वाद्य न दो थे, था मधुमय लीला-संचार ।
था यह एक विलक्षण पावन परम प्रेमरसका विस्तार ॥
मधुर परम इस रस-सागरमें गोपीजनका ही अधिकार ।
परम त्यागका मूर्त रूप लख जिन्हें किया हरिने स्वीकार ॥
प्रेममयी ब्रज-रमणी-गण-मण्डलमें हुए सुशोभित श्याम ।
अगणित राशि तारिकामें अकलङ्क पूर्ण विधु विमल ललाम ॥
अथवा नव नीलाभ-श्याम घन दामिनि-दलमें रहे विराज ।
घन दामिनि, दामिनि घन अन्तर अगणित उभय अतुल द्युति साज ॥
रासेश्वरी राधिकाके एकाधिपत्यमें सुन्दर साज ।
शुचि सौन्दर्य मधुर रसमय असमोर्ध्व अमित बिजली-घनराज ॥
एक एकके मध्य मनोहर एक एक, सब मिल, दे ताल ।
रास-रसिक रस-नृत्य-निरत, शुचि बाज रहे मृदु वाद्य रसाल ॥

[श्रीराधा-माधव-चिन्तन]

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

(संस्करण २,१५,०००)

कल्याण, सौर कार्तिक, वि० सं० २०७३, श्रीकृष्ण-सं० ५२४२, अक्टूबर २०१६ ई०

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१- महारास-लीला	३	१५- हिन्दू संस्कृतिमें जलके प्रति पूज्य भाव (वैद्य श्रीबालकृष्णजी गोस्वामी)	२३
२- कल्याण	५	१६- भगवद्गीता-विज्ञान (श्रीसुमितचन्द्रजी श्रीवास्तव, एम० एस-सी०)	२५
३- पुष्पकारुढ़ श्रीराम [आवरणचित्र-परिचय]	६	१७- सरलता और आनन्द (पं० श्रीलालजीरामजी शुक्ल एम०ए०)	२६
४- प्रतिकूलताका नाश (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	७	१८- सूडानमें गोमाताकी पूजा-अर्चना	२७
५- गोमूत्रमें मिला सोना	८	१९- भक्त श्रीगणेश योगीन्द्र [संत-चरित] (पं० श्रीदामोदर प्रह्लादजी पाठक, शास्त्री)	२८
६- जीवोंकी स्वतन्त्रता (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)	९	२०- आदर्श बी०ए० बहू [प्रेरक कथा] (पं० श्रीरामनरेशजी त्रिपाठी)	३१
७- 'मैं सेवक सीतापति मोरे' [कविता] (पं० श्रीबाबूलालजी द्विवेदी, 'मानस मधुप', साहित्यायुर्वेदरत्न)	१०	२१- मानव जीवनमें गुण-दोष (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	३६
८- भगवान्का परम भक्त कौन? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ...	११	२२- साधनोपयोगी पत्र	३७
९- राधा बिना कृष्ण आधा (श्रीफतेहचन्दजी अग्रवाल)	१४	२३- व्रतोत्सव-पर्व [कार्तिकमासके व्रतपर्व]	३९
१०- राधा [कविता] (श्रीशिवचरणजी चौहान)	१६	२४- श्रीभगवन्नाम-जपकी शुभ सूचना	४०
११- साधकोंके प्रति— (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)	१७	२५- श्रीभगवन्नाम-जपके लिये विनीत प्रार्थना	४३
१२- अतिथिदेवो भव (डॉ० श्रीओमप्रकाशजी वर्मा)	२०	२६- कृपानुभूति	४५
१३- काशीमें देवियोंके मन्दिर और उनकी यात्रा (पं० श्रीशालिग्रामजी शर्मा)	२०	२७- पढ़ो, समझो और करो	४६
१४- महारासायन (श्रीसीतारामदासजी ओंकारनाथ)	२२	२८- मनन करने योग्य	४९
		२९- गोरक्षाका प्रश्न [राधेश्याम खेमका]	५०

चित्र-सूची

१- पुष्पकारुढ़ श्रीराम	(रंगीन)	आवरण-पृष्ठ
२- महारास-लीला	(")	मुख-पृष्ठ
३- पुष्पकारुढ़ श्रीराम	(इकरंगा)	६
४- भक्त अकूर	(")	१०
५- धर्मात्मा शुक और इन्द्रकी बातचीत	(")	४९

एकवर्षीय शुल्क

सजिल्द ₹२२०

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनंद भूमा जय जय॥

जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥

जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

विदेशमें Air Mail }
सजिल्द शुल्क }

वार्षिक US\$ 50 (₹3000)
पंचवर्षीय US\$ 250 (₹15,000)

{ Us Cheque Collection
{ Charges 6\$ Extra

पंचवर्षीय शुल्क

सजिल्द ₹११००

संस्थापक — ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका

आदिसम्पादक — नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार

सम्पादक — राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक — डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़

केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : gitapress.org

e-mail : kalyan@gitapress.org

09235400242/244

सदस्यता-शुल्क — व्यवस्थापक — 'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस — २७३००५, गोरखपुर को भेजें।

Online सदस्यता-शुल्क — भुगतान हेतु — gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें।

अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ें।

कल्याण

याद रखो—जबतक तुम्हें अपना लाभ और दूसरेका नुकसान सुखदायक प्रतीत होता है, तबतक तुम नुकसान ही उठाते रहोगे।

जबतक तुम्हें अपनी प्रशंसा और दूसरेकी निन्दा प्यारी लगती है, तबतक तुम निन्दनीय ही रहोगे।

जबतक तुम्हें अपना सम्मान और दूसरेका अपमान सुख देता है, तबतक तुम अपमानित ही होते रहोगे।

जबतक तुम्हें अपने लिये सुखकी और दूसरेके लिये दुःखकी चाह है, तबतक तुम सदा दुखी ही रहोगे।

जबतक तुम्हें अपनेको न ठगाना और दूसरेको ठगना अच्छा लगता है, तबतक तुम ठगाते ही रहोगे।

याद रखो—जबतक तुम्हें अपने दोष नहीं दीखते और दूसरेमें खूब दोष दीखते हैं, तबतक तुम दोषयुक्त ही रहोगे।

जबतक तुम्हें अपने हितकी और दूसरेके अहितकी चाह है, तबतक तुम्हारा अहित ही होता रहेगा।

जबतक तुम्हें सेवा करानेमें सुख और सेवा करनेमें दुःख होता है, तबतक तुम्हारी सच्ची सेवा कोई नहीं करेगा।

जबतक तुम्हें लेनेमें सुख और देनेमें दुःखका अनुभव होता है, तबतक तुम्हें उत्तम वस्तु कभी नहीं मिलेगी।

जबतक तुम्हें भोगमें सुख और त्यागमें दुःख होता है, तबतक तुम असली सुखसे वंचित ही रहोगे।

जबतक तुम्हें विषयोंमें प्रीति और भगवान्में अप्रीति है, तबतक तुम सच्ची शान्तिसे शून्य ही रहोगे।

जबतक तुम्हें शास्त्रोंमें अश्रद्धा और मनमाने आचरणोंमें रति है, तबतक तुम्हारा कल्याण नहीं होगा।

जबतक तुम्हें साधुओंसे द्वेष और असाधुओंसे प्रेम है, तबतक तुम्हें सच्चा सुपथ नहीं मिलेगा।

जबतक तुम्हें सत्संगसे अरुचि और कुसंगमें प्रीति है, तबतक तुम्हारे आचरण अशुद्ध ही रहेंगे।

जबतक तुम्हें जगत्में ममता और भगवान्से लापरवाही है, तबतक तुम्हारे बन्धन नहीं कटेंगे।

याद रखो—जबतक तुम्हें अभिमानसे मित्रता और विनयसे शत्रुता है, तबतक तुम्हें सच्चा आदर नहीं मिलेगा।

जबतक तुम्हें स्वार्थकी परवा है और परार्थकी नहीं, तबतक तुम्हारा स्वार्थ सिद्ध नहीं होगा।

जबतक तुम्हें बाहरी रोगोंसे डर है और काम-क्रोधादि भीतरी रोगोंसे प्रीति है, तबतक तुम नीरोग नहीं हो सकोगे।

जबतक तुम्हें धर्मसे उदासीनता और अधर्मसे प्रीति है, तबतक तुम सदा असहाय ही रहोगे।

जबतक तुम्हें मृत्युका डर है और मुक्तिकी चाह नहीं है, तबतक तुम बार-बार मरते ही रहोगे।

जबतक तुम्हें घर-परिवारकी चिन्ता है और भगवान्की कृपापर भरोसा नहीं है, तबतक तुम्हें चिन्ता-युक्त ही रहना पड़ेगा।

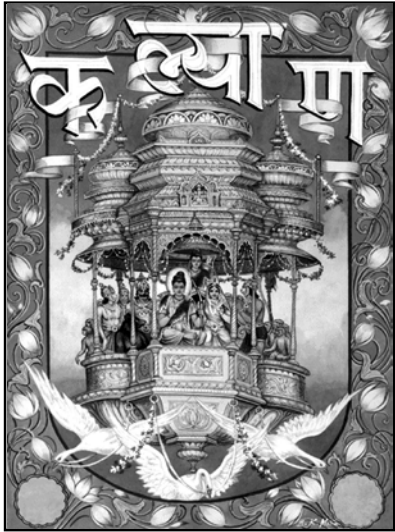
जबतक तुम्हें प्रतिशोधसे प्रेम है और क्षमासे अरुचि है, तबतक तुम शत्रुओंसे घिरे ही रहोगे।

जबतक तुम्हें विपत्तिसे भय है और प्रभुमें अविश्वास है, तबतक तुमपर विपत्ति बनी ही रहेगी।

‘शिव’

‘शिव’

पुष्पकारूढ़ श्रीराम



केकीकण्ठाभनीलं सुरवरविलसद्विप्रपादाब्जचिह्नं
शोभाढ्यं पीतवस्त्रं सरसिजनयनं सर्वदा सुप्रसन्नम्।
पाणौ नाराचचापं कपिनिकरयुतं बन्धुना सेव्यमानं
नौमीड्यं जानकीशं रघुवरमनिशं पुष्पकारूढरामम्॥

(रा०च०मा० ७। मंगलाचरण)

अर्थात् मोरके कण्ठकी आभाके समान (हरिताभ) नीलवर्ण, देवताओंमें श्रेष्ठ, ब्राह्मण (भृगुजी) के चरण-कमलके चिह्नसे सुशोभित, शोभासे पूर्ण, पीताम्बरधारी, कमलनेत्र, सदा परम प्रसन्न, हाथोंमें बाण और धनुष धारण किये हुए, वानरसमूहसे युक्त, भाई लक्ष्मणजीसे सेवित, स्तुति किये जाने योग्य, श्रीजानकीजीके पति, रघुकुलश्रेष्ठ, पुष्पक विमानपर सवार श्रीरामचन्द्रजीको मैं निरन्तर नमस्कार करता हूँ।

पुष्पक विमान इच्छानुसार चलनेवाला दिव्य विमान था। उस विमानमें सोनेके खम्भे और वैदूर्यमणिके फाटक लगे थे। वह सब ओरसे मोतियोंकी जालीसे ढका हुआ था। उसके भीतर ऐसे-ऐसे वृक्ष लगे थे, जो सभी ऋतुओंमें फल देनेवाले थे। उसका वेग मनके समान तीव्र था। वह अपने ऊपर बैठे हुए लोगोंकी इच्छाके अनुसार सब जगह जा सकता था तथा चालक जैसा चाहे, वैसा छोटा या बड़ा रूप धारण कर लेता था। उस आकाशचारी विमानमें मणि और सुवर्णकी सीढ़ियाँ तथा तपाये हुए सोनेकी वेदियाँ बनी थीं। वह देवताओंका ही वाहन था और दुष्टों के परदेवाला

नहीं था। सदा देखनेमें सुन्दर और चित्तको प्रसन्न करनेवाला था। उसके भीतर अनेक प्रकारके आश्चर्य-जनक चित्र थे। उसकी दीवारोंपर तरह-तरहके बेल-बूटे बने थे, जिनसे उसकी विचित्र शोभा होती थी। ब्रह्मा (विश्वकर्मा) ने उसका निर्माण किया था। वह सब प्रकारकी मनोवांछित वस्तुओंसे सम्पन्न, मनोहर और परम उत्तम था। न अधिक ठण्डा था और न अधिक गरम। वह विमान सभी ऋतुओंमें आराम पहुँचानेवाला तथा मंगलकारी था।

ब्रह्माजीने यक्षोंके स्वामी राजराज वैश्रवण कुबेरकी सेवाओंसे प्रसन्न होकर उन्हें यह विमान दिया था। रावण इन कुबेरका विमातासे उत्पन्न भाई था। उसने दीर्घकालतक तपस्या करके ब्रह्माजीको प्रसन्न किया और उनसे गन्धर्वों, देवताओं, असुरों, यक्षों, राक्षसों, सर्पों, किन्नरों तथा भूतोंसे अपराजेयताका वरदान प्राप्त किया। वरदानसे गर्वित रावणने सबसे पहले अपने भाई कुबेरको युद्धमें परास्त किया और उन्हें लंकाके राज्यसे बहिष्कृत कर दिया। यक्षराज कुबेर लंका छोड़कर गन्धर्वों, यक्षों, राक्षसों तथा किम्पुरुषोंके साथ गन्धमादन पर्वतपर आकर रहने लगे, परंतु रावण इतनेसे ही सन्तुष्ट नहीं हुआ, उसने पुनः आक्रमण करके उनका पुष्पक विमान भी छीन लिया। तब कुबेरने कुपित होकर उसे शाप दिया—‘अरे! यह विमान तेरी सवारीमें नहीं आ सकेगा। जो तुझे युद्धमें मार डालेगा, उसीका यह वाहन होगा। मैं तेरा बड़ा भाई होनेके कारण मान्य था, परंतु तूने मेरा अपमान किया है। इससे बहुत शीघ्र तेरा नाश हो जायगा’—

विमानं पुष्पकं तस्य जहाराक्रम्य रावणः।

शशाप तं वैश्रवणो न त्वामेतद् वहिष्यति॥

यस्तु त्वां समरे हन्ता तमेवैतद् वहिष्यति।

अवमन्य गुरुं मां च क्षिप्रं त्वं न भविष्यसि॥

(महा० वन० २७५। ३४-३५)

राम-रावण-युद्धमें जब रावणका वध हो गया, तो विभीषणने लक्ष्मण और सीतासहित श्रीरामजीके वापस अयोध्या लौटनेहेतु पुष्पक विमान उन्हें प्रस्तुत किया था। इस प्रकार श्रीरामजी पुष्पकारूढ़ होकर अयोध्या आये और अयोध्या आनेके पश्चात् उन्होंने उस दिव्य विमानका पुनः उपयोग नहीं किया।

प्रतिकूलताका नाश

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

प्रतिकूलताके अनुभवमें ही दुःख है, अतएव दुःखोंके आत्यन्तिक अभावके लिये प्रतिकूलताका त्याग करना चाहिये। इसके लिये भक्ति और ज्ञान ये दो उपाय हैं एवं दोनों ही उत्तम हैं। अधिकारी-भेदके अनुसार ज्ञानियोंके लिये ज्ञानयोग और भक्तोंके लिये कर्मयोग भगवान्ने (गीता ३।३)-में बतलाया है तथापि ज्ञानकी अपेक्षा सर्वसाधारणके लिये भक्तिका उपाय ही सुगम है। ईश्वर-भक्तिके प्रतापसे सम्पूर्ण दुःखोंके मूल प्रतिकूलताका अत्यन्त अभाव हो जाता है। ईश्वर-भक्तकी किसी भी जीवमें और किसी भी पदार्थमें प्रतिकूलता नहीं रहती, क्योंकि वह समझता है कि ईश्वर ही सम्पूर्ण भूत-प्राणियोंके हृदयमें आत्मारूपसे विराजमान हो रहे हैं, अतएव किसीसे भी द्वेष करना परमेश्वरसे ही द्वेष करना है। इसके अतिरिक्त वह सम्पूर्ण पदार्थोंकी उत्पत्ति और विनाशमें भी ईश्वरकी अनुकूलताका ही दर्शन करता है। इस हालतमें वह किससे कैसे द्वेष करे? जीवोंके कर्मोंके अनुसार ही उनके सुख-दुःख-भोगके लिये परमेश्वर सम्पूर्ण पदार्थोंको रचते हैं। जो पुरुष इस प्रकार समझता है, वह ईश्वरके किये हुए प्रत्येक विधानमें वैसे ही प्रसन्नचित्त रहता है, जैसे मित्रके किये हुए विधानमें मित्र और पतिके विधानमें उत्तम स्त्री रहती है। उत्तम पतिव्रता स्त्री पतिकी अनुकूलतामें ही अपनी अनुकूलता जानती है। अर्थात् पतिकी अनुकूलता ही उसके लिये अपनी अनुकूलता है। पति जो भी कुछ भली-बुरी चीज लाता है अथवा जो कुछ भी चेष्टा करता है, वह उसीमें प्रसन्न रहती है, इसी प्रकार भगवान्का भक्त भी, भगवान् जो भी कुछ करते हैं हमारे अच्छेके लिये करते हैं, यह समझकर उनकी की हुई प्रत्येक चेष्टामें एवं पदार्थोंकी उत्पत्ति और विनाशमें सदा प्रसन्नचित्त रहता है; यानी परेच्छा या अनिच्छासे जो भी कुछ अच्छे-बुरे पदार्थोंकी एवं सुख-दुःखोंकी प्राप्ति होती है, वे सब ईश्वरकी इच्छासे होनेके कारण ईश्वरकी लीला हैं, इस प्रकार समझकर वह हर समय आनन्दमें मग्न रहता है। वस्तुतः पतिव्रता स्त्रीका उदाहरण भी ईश्वरके साथ लागू नहीं हो सकता; क्योंकि मनुष्योंमें स्वार्थ रहता है एवं ज्ञानकी कमी होनेके कारण उससे भूल भी हो सकती है, किंतु ईश्वर निर्भ्रान्त हैं, इसलिये उनकी लीला न्याय और ज्ञानसे

पूर्ण है और उसमें जीवोंका हित भरा हुआ है।

विचार-दृष्टिसे देखा जाय तो सांसारिक पदार्थोंमें होनेवाली अनुकूलता भी त्याज्य है; क्योंकि सांसारिक सुख क्षणिक, नाशवान् एवं परिणाममें दुःखरूप होनेके कारण सांसारिक अनुकूलतामें होनेवाला सुख भी वस्तुतः दुःख ही है। जहाँ संसारके पदार्थोंमें अनुकूलता होती है, वहीं उनके प्रतिपक्षमें प्रतिकूलता रहती है और जहाँ अनुकूलता-प्रतिकूलता है, वहीं राग-द्वेष पैदा होते हैं। राग-द्वेषसे काम-क्रोधादि अनेक प्रकारके विकार उत्पन्न होकर महान् दुःखोंकी उत्पत्ति होती है, अतएव सांसारिक अनुकूलता और प्रतिकूलता दोनोंहीको अनन्त दुःखोंका कारण समझकर त्याग करना चाहिये। इसीलिये भगवान्ने (गीता १३।९) -में लिखा है कि इष्ट और अनिष्टकी प्राप्तिमें सदा-सर्वदा समचित्त रहना चाहिये।

इस प्रकारकी समता ईश्वरकी शरण होनेसे अनायास ही प्राप्त हो जाती है। ईश्वर सुहृद् हैं, दयालु हैं, प्रेमी हैं और ज्ञानस्वरूप हैं, इस प्रकार समझनेवाला पुरुष अपनी इच्छाका सर्वथा त्याग करके केवल एक ईश्वरकी इच्छाके ही परायण हो जाता है। वह अपने मन, बुद्धि और इन्द्रियोंको ईश्वरके अर्पण कर देता है, ईश्वरकी कठपुतली बन जाता है। ईश्वर ज्यों कराता है त्यों ही करता है, अपनी इच्छासे कुछ भी नहीं करता एवं ईश्वरके किये हुए विधानमें सदा-सर्वदा प्रसन्नचित्त रहता है। इसीका नाम शरण है।

सुखकारक पदार्थमें अनुकूलता और दुःखकारक पदार्थमें प्रतिकूलता स्वभावसिद्ध है। विचार करनेसे संसारका कोई भी पदार्थ वास्तवमें सुखकारक नहीं है। परम आनन्दस्वरूप एवं परम आनन्ददायक परम हितकारी केवल एक परमात्मा ही हैं; इसलिये वास्तवमें परमात्मामें ही अनुकूलता होनी चाहिये। जो इस रहस्यको समझता है, वह परमात्माके अनुकूल बन जाता है और उसकी सम्पूर्ण क्रियाएँ परमात्माके अनुकूल हो जाती हैं। वह उन लीलामयकी प्रत्येक लीलामें उन लीलामयका दर्शन करता रहता है; इससे उसके लिये प्रतिकूलताका एवं सम्पूर्ण दुःखोंका अत्यन्त अभाव हो जाता है। वह उन लीलामयकी लीलाको और प्रेमास्पद परमात्माको अपने परम अनुकूल देखकर प्रतिक्षण मुग्ध होता रहता है।

इसलिये जिसकी स्थिति उस विज्ञानानन्दधन परमात्माके स्वरूपमें एकीभावसे हो जाती है, उसकी दृष्टि भी सम्पूर्ण संसारमें सम हो जाती है और सांसारिक अनुकूलता एवं प्रतिकूलताकी दृष्टिका अत्यन्त अभाव हो जाता है। जब अनुकूलता और प्रतिकूलताका अत्यन्त अभाव हो जाता है तब राग-द्वेषादि सम्पूर्ण अनर्थोका एवं सम्पूर्ण दुःखोंका अत्यन्त अभाव हो जाता है एवं उसे परम शान्ति और परम आनन्दकी प्राप्ति हो जाती है। वास्तवमें वह परम आनन्द ब्रह्म ही परम अनुकूल है एवं वही सबका आत्मा होनेसे अपना आत्मा है। जब इस प्रकारका ज्ञान हो जाता है तब फिर उसकी प्रतिकूल बुद्धि कहीं नहीं हो सकती; क्योंकि अपने आपमें प्रतिकूलता नहीं होती। इस प्रकारके ज्ञानके द्वारा या उपर्युक्त ईश्वर-भक्तिद्वारा सम्पूर्ण दुःखोंके मूल प्रतिकूलताका सर्वथा नाश करना चाहिये।

गोमूत्रमें मिला सोना

[गो-सम्पदासे साधार]

जीवोंकी स्वतन्त्रता

(ब्रह्मलीन धर्मसंप्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)

भगवद्भक्तिनिष्ठा अथवा तत्त्वज्ञाननिष्ठामें जैसे सदाचार, काम-क्रोधादिका राहित्य अपेक्षित है, वैसे ही निरहंकारिता भी परम अपेक्षित है। यदि काम-क्रोधादिसे बचनेका ही घमण्ड हो गया तो भी पतन ही समझना चाहिये। श्रीनारदजीने कामको जीत लिया, परंतु उसीका घमण्ड होनेसे अन्तमें उन्हें कष्ट उठाना पड़ा। महात्मा मार्कण्डेयके सामने भी कामादि दोष आये, उन्होंने उनपर विजय प्राप्त कर ली, परंतु उसका कुछ भी मद उन्हें न हुआ—‘इतीन्द्रानुचरैर्ब्रह्मन् धर्षितोऽपि महामुनिः। यन्नागादहमोभावं न तच्चित्रं महत्सु हि ॥’ भागवतोंके लक्षणमें कहा गया है कि जिसे जन्म-कर्मादि किसी भी हेतुसे इस देहमें अभिमान नहीं होता, वह भगवान्को प्रिय होता है—‘न यस्य जन्मकर्मभ्यां न वर्णाश्रम-जातिभिः। सज्जतेऽस्मिन्हंभावो देहे वै स हरेः प्रियः ॥’ अनादि अध्यासके कारण ही प्राणी देह, इन्द्रिय, मन, बुद्धि, अहंकारादिकी हलचलोंका अपनेमें आरोप करके अपनेको कर्ता मानने लगता है। बस, यही अहंकार तथा कर्म-लेप ही प्राणीको निरन्तर जनन-मरणके चक्रमें डालता है। भगवान्ने कहा है जो देहादिकी हलचलमें भी आत्माको निर्लेप तथा अकर्ता ही मानता है, देहादिकी निश्चेष्टताके आधारपर आत्माके अकर्तापनकी भ्रान्ति नहीं करता, वही बुद्धिमान् है। जपा-कुसुमके सम्बन्धसे स्वच्छ स्फटिकमें जिस समय अरुणिमाका भान हो रहा हो, ठीक उसी समय स्फटिकको स्वच्छ ही समझना बुद्धिमान्नी है। जिसको यह लेप न हो, वह किसी भी भले-बुरे कर्मोंसे बद्ध नहीं होता। इसी सम्बन्धमें ‘कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः। स बुद्धिमान् मनुष्येषु’, ‘यस्य नाहङ्कृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते। हत्वापि स इमांल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते’ इत्यादि भगवदुक्तियाँ हैं।

बिना तपस्या, भजन तथा सम्यक्-विचारके आत्माके अकर्तृत्वकी दृढ़ भावना नहीं होती। कहीं प्राणी पापोंसे बचनेके लिये झूठी भावना करता है कि मैं तो अकर्ता

हूँ, परंतु वह केवल आत्मवंचना होती है। उसकी अन्तरात्मामें बार-बार उस पापका लगाव होता ही है। ऐसा प्राणी अशुभ कर्मोंके लिये अपनेको अकर्ता मान भी लेता है, परंतु शुभ कर्मोंका कर्ता तो वह अपने आपको ही मान बैठता है। एक सज्जनसे गोहत्या हो गयी, तो उन्होंने कह दिया कि ‘मैं कर्ता नहीं हूँ, हाथ और उसका देवता इन्द्र इसका जिम्मेदार है। हत्या इन्द्रके पास गयी। इन्द्रने कहा—‘अच्छा ठहरो।’ इन्द्रने वृद्धवेषमें वहाँ जाकर जब उसके आश्रम तथा कूपकी प्रशंसा करना प्रारम्भ किया, तब उसने कहा—‘यह सब हमने ही किया है।’ भगवान् परब्रह्मने देवताओंकी सहायता करके उन्हें विजय प्रदान की, परंतु देवताओंने उसे अपनी विजय माना। समझा कि हमने अपने अस्त्र-शस्त्र, सैनिक, बुद्धि तथा बाहुबलसे देवासुर-संग्राममें विजय पायी है। भगवान्ने समझ लिया कि बस, ये भी असुर हो गये; क्योंकि असु-प्राण-तदुपलक्षित अनात्माको आत्मा मानकर उसके वैभवमें जो रमण करता है, वही ‘असुर’ है अथवा अशोभन अनात्मामें रमण करनेवाला भी प्राणी असुर ही हो सकता है। दिव्य तेजोमय स्वरूपसे देवताओंके सामने प्रकट होकर भगवान्ने यह दिखला दिया कि अग्नि, मातरिश्वा (वायु) आदि मेरे बिना एक तृणको भी जला तथा उड़ा नहीं सकते, दुनिया एक मेरी ही शक्तिसे सर्वत्र काम कर रही है, प्राणी तो कठपुतलीके समान है। जैसे पंखों और लट्टुओंमें हलचल तथा प्रकाश तभीतक है, जबतक उनका सम्बन्ध विद्युद्भवनसे है, उस सम्बन्धके टूटते ही हलचल और प्रकाश दुर्लभ ही है। इसी तरह अचिन्त्य, अनन्त शक्तियोंके अधिष्ठान भगवान्का जहाँतक सम्बन्ध है, वहींतक किसीकी भी कोई करामात हो सकती है।

प्रह्लादने अपने पितासे कहा था—‘राजन्! केवल मेरा ही नहीं, अपितु सब बलवानोंका बल भी भगवान् ही है।’ सम्पूर्ण बलोंका आश्रय प्राण है और उस प्राणका भी प्राण, प्राणका भी आश्रय भगवान् ही है।

निरुपाधिक आत्मा सर्वत्र एक है, अकर्ता है। सोपाधिकमें



जो भी शक्ति आती है, वह भगवान् से आती है। अक्रूरने कहा—प्रभो! हम आपके शरण आये हैं—यह भी आपकी ही अनुकम्पा है, मेरा तो वह भी सामर्थ्य नहीं है। जब प्राणियोंका संसार मिटना होता है, तब सन्तोंकी कृपासे आपके चरणोंमें प्रीति होती हैं—‘सोऽहं तवाङ्घ्र्युपगतोऽस्यसतां दुरापं तच्चाप्यहं भवदनुग्रह ईश मन्ये। पुंसो भवेद् यर्हि संसरणापवर्गस्त्वय्यब्जनाभ सदुपासनया मतिः स्यात्’। भगवान् ने भी ब्रह्मासे कहा

है कि ‘तुमने जो मेरी कथाओंसे युक्त मेरी स्तुति की है और जो तुम्हारी तपस्यामें निष्ठा हुई है, वह सब मेरा ही अनुग्रह है—‘यच्चकर्थाङ्ग मत्स्तोत्रं मत्कथाभ्युदयाङ्कितम्। यद्वा तपसि ते निष्ठा स एष मदनुग्रहः॥’ युधिष्ठिरके प्रति देवर्षि नारदकी भी उक्ति है कि ‘राजन् सम्पूर्ण संसार सर्वथा ईश्वरके वशमें है, पालकोंके सहित समस्त लोक उसीको बलि प्रदान करते हैं—‘मा कञ्चन शुचो राजन् यदीश्वरवशं जगत्। लोकाः सपाला यस्येमे वहन्ति बलिमीशितुः॥’ जैसे नाक छेदकर नथान डालकर पराधीन बनाया हुआ बैल स्वामीका काम करता है, वैसे ही सब प्राणी पराधीन होकर परमेश्वरकी रुचिका अनुसरण कर रहे हैं। जैसे बालकोंके खेलनेके खिलौने खेलनेवाले बालकके पराधीन होते हैं, वैसे ही सब प्राणी ईश्वरके पराधीन होते हैं—‘यथा क्रीडोपस्करावां संयोगविगमाविह। इच्छया क्रीडितुः स्यातां तथैवेशेच्छया नृणाम्॥’

काल-कर्म और गुणोंके पराधीन प्राणी स्वतन्त्रताका अहंकार करता है, तो उसका यह उन्माद ही है। जैसे घट, कुण्डल, तरंग आदिकी गति-स्थिति आदि मृत्तिका, सुवर्ण एवं जलके ही पराधीन है, वैसे ही जीवोंकी भी सम्पूर्ण स्थिति, प्रवृत्ति परमेश्वराधीन ही है।

‘मैं सेवक सीतापति मोरे’

(पं० श्रीबाबूलालजी द्विवेदी, ‘मानस मधुप’, साहित्यायुर्वेदरत्न)

भाव कुभाव सुश्रुषा कैसी, पता न सेवा धर्म।
उर प्रेरक जो कहते-करता, जग के सारे कर्म॥
कुछ भी नहीं पात्रता, फिर भी कहते मुझे न शर्म।
तेरा हूँ! इस अहंकार का ही पहिना है वर्म॥

सेवक सेव्य भाव बिनु भव से कोई पार न पाया।
तरना मुश्किल, प्रियतम से मिलने को मन ललचाया॥
भटका, भटक रहा, भटकों ने भी मिलकर भटकाया।
युग बीते थक गया जगत ने अब तक खूब रुलाया॥

‘उर अंकुरेड गर्व तरु भारी’—चौरासी को भोग।
योग, वियोग, सुयोग कहूँ या इसको जुगुल सँयोग॥
करुणाकर की करुणा का हूँ, करुणिक, हे करुणाकर!

अस अभिमान जाइ जनि भोरे—मुनि सुतीक्ष्ण की बानी।
मैं सेवक सीतापति मोरे—यही टेक मनमानी॥
किसी योनि में जन्म मिले, पर रहे न मन में ग्लानी।
तुलसी के मानस का सम्बल, पाई यही निशानी॥

तुम अखण्ड मैं खण्ड, सदा से सत्ता एक रही है।
ईश्वर अंश जीव अविनाशी—जो यह उक्ति सही है॥
अहम् अस्मि, तत् त्वम् अस्मि, तत्त्वम् अस्मि में इतना जोड़ो।
मैं तेरा हूँ, तू मेरा है—तू तू मैं मैं छोड़ो॥

मैं तेरा हूँ! तुम मेरे हो, मैं कहता—तुम कह दो।
प्राण प्राणधन तू मेरा है! बस इतना ही कह दो॥
अधमोद्धारक आप, अधम की यही माँग या सेवा।

भगवान्‌का परम भक्त कौन ?

(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)

भक्त-प्रेमी लोग बड़े विलक्षण होते हैं। दक्षिण भारतमें दो भक्त हुए स्त्री-पुरुष। जिनमें एकका नाम था राँका और दूसरेका नाम था बाँका। राँका पति थे और बाँका उनकी पत्नी थी। वे अत्यन्त दरिद्र थे और भगवान्‌के परम भक्त थे। उनको भगवान्‌का ही आश्रय था। हम लोग कई जगह भूल कर जाते हैं, जब हम यह मानते हैं कि धनसे, पदसे, अधिकारसे, संसारकी वस्तुओंसे, संसारके सुखोंसे भगवान्‌की कृपाका नाप-तौल होता है, उस समय हम भूल जाते हैं। पता नहीं भगवान्‌की कृपा कल किस रूपमें आयेगी। इसी रूपमें आये, सो बात नहीं है। उनके विनाशके रूपमें भी आती है। जब भगवान्‌की कृपाका वह अवलम्बन करता है, तब सब जगह भगवान्‌की कृपा देखता है। वह वस्तु नहीं देखता है। वस्तुकी प्राप्तिमें कृपा हो सकती है और वस्तुके विनाशमें भी कृपा हो सकती है, उससे बढ़कर। इसलिये वस्तुका कोई महत्त्व नहीं है।

जो गरीब हैं, जिनके पास पैसा नहीं, जिनके पास अधिकार नहीं, धन नहीं, मिल्लिकयत नहीं, एक दिन भी पूजा नहीं करता, जानता नहीं, जो संसारसे अंजान हैं, लोग जिनको तुच्छ मानते हैं वे भगवान्‌के परम भक्त हो सकते हैं। इसे कौन जानता है। राँका-बाँका ऐसे ही थे। उन्हें कोई नहीं जानता था, परंतु वे भगवान्‌के परम भक्त थे। वे रोज दोनों जंगलमें जाकर लकड़ी लाते थे और लकड़ीका बोझा उतना ही, जिससे उनका कार्य चल जाय। उनमें कोई संग्रह, भोगकी आसक्ति नहीं थी। अधिक लाकर जमा करनेकी प्रवृत्ति नहीं थी। लकड़ीका एक बोझा लाते। उस बोझेको बाजारमें बेच देते। उससे जितना पैसा मिलता, उसमेंसे आधे पैसे दूसरेको दे देते। हमारे यहाँ शास्त्र कहते हैं कि कमाईका दशांश दान दे देना चाहिये। राँका-बाँका उस आधे पैसेसे अपना पेट भरते और रात-दिन भगवानका भजन करते—

निरन्तर। ऐसे लोग सबसे ऊँचे हैं। भगवान् ने गीता में कहा है—

योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना ।
श्रद्धावान्भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः ।

(गीता ६।४७)

जो श्रद्धावान् हैं, वे सारे योगियोंमें परम योगी हैं ।
जो अन्तरात्मासे मृदुको भजते हैं ।

नामदेवजी सिद्ध महात्मा थे। उन्होंने राँका-बाँकाके दारिद्र्यको देखा कि पहननेको कपड़ा नहीं, बैठनेको जगह नहीं, सोनेको झोपड़ी नहीं। इतनी दरिद्रता थी। तब एक दिन नामदेवजीने भगवान्से प्रार्थना की कि महाराज ! ये आपके इतने महान् भक्त हैं। आपके प्रेमी हैं। इनको इतना दारिद्र्य, इनकी यह दशा है। आपसे इसे कैसे देखा जाता है ? भगवान्ने कहा—इनकी यह दशा देखकर बड़ी प्रसन्नता होती है। मैं इनके साथ-साथ रहता हूँ। जहाँ बहुत है, वहाँ नहीं रहता।

नामदेवजीने कहा—महाराज! आप रहते तो हैं, परंतु ये बेचारे भूखों मरते हैं। आप सोचिये! भगवान्ने कहा—ये लेते नहीं हैं। इनको दूसरी चीजसे प्रेम है। आप देकर तो देखिये—नामदेवजीने कहा। भगवान्ने कहा—अच्छा! तुम देखना। कल सबेरे ये जब जायँ लकड़ी काटने, तब उस समय रास्तेमें तुम अमुक जगह खड़े हो जाना। उन्होंने कहा—ठीक है। जब वे जंगलमें जाने लगे, तब भगवान्ने अपनी मायासे एक सोनेकी मुहरोंकी थैली भरकर वहाँ डाल दी। उसका कपड़ा पारदर्शी था। मुहरें बाहरसे दीखती थीं। ये राँकाजी मस्त होकर भगवान्का कीर्तन करते हुए चले जा रहे थे। उन्हें बाहरी होश था नहीं। उनका पैर उस थैलीपर पड़ा। पैर पड़ते ही छनऽ की आवाज हुई। आवाज होनेपर उन्होंने देखा तो सोनेकी मुहरें थीं। तब वे जल्दी-जल्दी उसपर धल डालने लगे। इतनेमें बाँकाजी आ पहुँची। उन्होंने

जो भगवान्का हो जाता है, उसे भगवान् सदा अपने समीप रखनेमें प्रसन्नताका अनुभव करते हैं। यदि दूर भेज देते हैं तब भी वह नाराज नहीं होता है, परंतु इससे भगवान्की अनुकूलता प्राप्त हो जाती है। इसलिये हम भगवान्के हो जायँ—यह एक बात है। दूसरी बात, हम भगवान्के अनुकूल कार्य करें। उनकी रुचिके अनुसार कार्य करें। जब यह हो जायगा तब हमारी रुचि अलग नहीं रहेगी। हमारी आकांक्षा अलग नहीं रहेगी। भक्त कौन है ? जो अपनी सारी आकांक्षाओंको अपनी सारी चाहोंको, अपने सारे मनोभिलाषको भगवान्के चाहमें मिला दे। अपनी अलग चाह रहे ही नहीं। अपनी चाह न पूरी हो तो कोई परवाह नहीं। केवल और केवल भगवान्की चाह पूरी हो। तब क्या होगा ? उसे भगवान् महत्त्व देंगे कि यह मेरा है। उसके द्वारा वह कार्य करायेंगे, भगवान् जिस कार्यसे भगवान्का गौरव बढ़ता है। उसको भगवान् अपने स्तरपर रखेंगे, जिस स्तरपर रखनेसे भगवान् अपने-आपको सुखी अनुभव करेंगे। यह बड़े महत्त्वकी बात है और इसके हम सभी अधिकारी हैं। यह चीज बहुत बड़ी है और बहुत सस्ती भी है। सस्ती इसलिये कि इसमें और किसी प्रकारके विद्याकी, कर्मकी, किसी विशेष ज्ञानकी, किसी बहुत बड़ी साधनाकी, योगधारणाकी, षड्चक्रभेदनकी, कुण्डली-जागरणकी कोई आवश्यकता नहीं है। यह सब भी मार्ग हैं और सब ठीक हैं, परंतु इसमें तो केवल भावकी आवश्यकता है। हम भावसे अपनेको भगवान्का बना लें। अपनेको अपना न रखें। अपनेको जगत्का न रखें। अपनेको विषयोंका न रखें। अपनेको कामना, वासना, आसक्ति और ममताका गुलाम न रखें। केवल भगवान्का बना लें। तब हम भगवान्के हो जायँगे। यह ममता, आसक्ति और कामना फिर रहेगी ही नहीं।

राधा बिना कृष्ण आधा

(श्रीफतेहचन्दजी अग्रवाल)

वह सुन्दर चित्रकार थी; किंतु उसने अपनी चित्रांकन-कलाका कभी अभिमान नहीं किया था। उसका नाम उसके गुणोंके अनुकूल था। ‘चित्रा’ नाम था उसका। उसका धाम था कृष्णकी पवित्र क्रीडास्थली ‘गोकुल’। चित्रांकनकी कलामें वह इतनी निपुण और सिद्धहस्त थी कि किसी भी वस्तु, पक्षी, पशु, ताल-तलैया या मानवका चित्र कल्पनामात्रपर बना लिया करती थी। बस, उसे हाथमें तूलिका उठा लेनेभरकी देर होती कि चित्र सर्वोत्कृष्ट एवं हृदयाकर्षी बन जाता।

‘चित्रा’ अपने कुशल-व्यवहार एवं मधुर स्वभाव तथा अद्भुत चित्रांकन-कलाके कारण आस-पासके क्षेत्रोंकी तो बात ही क्या, दूर-दूरतक चर्चित हो गयी थी।

वह बचपनसे ही 'कृष्ण'-भक्तिमें अनुरक्त थी। अपने आराध्य कृष्णका सुन्दर-सा चित्र वह बना सके, इसी प्रयासमें आज वह एक महान् चित्रकार बन गयी थी। उसकी ख्याति इतनी विस्तृत हो गयी थी कि किसीको भी चित्र बनवाना होता तो उसे बस एक ही नाम सूझता 'चित्रा'। किंतु इतनेपर भी चित्रा सन्तुष्ट नहीं थी। उसे अपनी चित्रांकन-कलापर कभी-कभी सन्देह होने लगता था। वह सोचा करती यदि मैं इतनी प्रतिभासम्पन्न चित्रकार हूँ तो क्यों नहीं अभीतक नन्दबाबाके नटखट श्यामसुन्दर कन्हैया मेरी ओर आकर्षित हुए? उन्होंने आजतक कभी भी मुझे अपना चित्र बनानेके लिये नन्दभवनमें आमन्त्रित क्यों नहीं किया? निश्चय ही अभी मैं पूर्णरूपसे चित्रांकन-कलामें निपुण नहीं हो पायी हूँ। अचानक फिर उसे दूसरे ही क्षण याद आता—मथुरा-नरेशने भी तो मुझसे अपना चित्र बनवाया था और उस चित्रसे इतने सन्तुष्ट हुए थे कि उन्होंने अपने दरबारमें राज्यशिल्पी-जैसा उच्चस्थान प्रदान करना चाहा था। मैंने ही तो उनके प्रस्तावको ठुकरा दिया था।

चित्रा 'कृष्ण' के नटखट स्वरूपको हृदयमें बसा घण्टों गुमशुम बैठी रहती, सोचती रहती, कितना अच्छा होता यदि मैं चित्रकार न होकर 'ग्वालिन' होती। कृष्ण-कन्हैयाको रोज माखन खिला पाती, रोज उसे देख पाती। उसके साथ धेनु चराने भी चली जाती, भले ही कोई कुछ भी कहता। मैं किसीकी परवा न करती। इस प्रकार मन-ही-मन कृष्णका स्मरण करते हुए चित्रा राधाजीके भाग्यको सराहती तथा कभी-कभी उसे राधाजीसे ईर्ष्या-सी होने लगती। चित्रा सोचती कहाँ चित्तचोर सुन्दर श्याम और कहाँ वह गाँवकी राधा। उसके घाघरेमें तो सदा गोबर लगा रहता है, पर भाग्य देखो, सदा श्यामसुन्दरका सामीप्य प्राप्त है उसे। धिक्कार है मुझे और मेरी कलाको जो कृष्णके सामीप्यसे वंचित है।

इस प्रकार नित्य शुद्ध और पवित्र हृदयसे ‘चित्रा’ ‘कृष्ण’ का चिन्तन किया करती। श्रीकृष्ण तो सदासे ही भाव और भक्तिके भूखे, भक्तवत्सल और अन्तर्यामी हैं। वे चित्राके विचित्र एवं निर्मल-निर्भ्रम प्रेमसे अन्ततः एक दिन द्रवित हो ही उठे और अचानक घरमें रूठकर बैठ गये।

प्रातःकालका समय है, यशोदा मैया सोच रही हैं क्या बात है आज लाला माखन माँगने नहीं आया! दूसरे दिनों तो भले ही सूर्य उदय होना भूल जाय, किंतु वह माखन माँगना नहीं भूलता। माखन, माखनकी रट लगा देता है। आज क्या बात है? माँ यशोदाकी चिन्ता स्वाभाविक थी। वे विचलित-सी हुई नन्दबाबाके पास गयीं। पूछा—आपने कन्हैयाको कहीं भेजा है? नहीं तो, भला वह कोई कार्य करता है जो मैं उसे कहीं भेजता! कल रात चन्द्रावलीकी मटकी फोड़ आया था। इसलिये भयवश मेरे सामने तो आ ही नहीं सकता। नन्दबाबाके

arma | MADE WITH LOVE BY-Avinash/Sh

उत्तरसे यशोदा अधिक चिन्तित हो उठी, बाली—अ



तो फिर कहाँ गया?’ इतनेमें ही आवाज आयी कृष्णकी—‘मैया, अरी ओ मैया! मैं यहाँ हूँ, किंतु मैं क्यों बताऊँ कि मैं कहाँ हूँ। मैं तो आज रूठा हुआ हूँ और रूठनेवाला चुप रहता है, इसलिये मैं नहीं बताता।’

नन्दबाबा और माँ यशोदा दोनों अपने कान्हाकी ऐसी बातें सुनकर मुँह दबाकर हँसने लगे। मैयाने देखा आवाज पलंगके नीचेसे आ रही है। उन्होंने झुककर पलंगके नीचे देखा, कन्हैया मुँह फुलाये घुटने मोड़े चुपचाप बैठा है। पसीनेसे तर हुआ श्यामल मुँह कुम्हला-सा गया है। यशोदा मैयाने प्रायः नीचे लेटते हुए पलंगके नीचेसे कन्हैयाको निकाला और वात्सल्यप्रेमके साथ अंकमें भरकर चूमने लगीं। फिर गोदमें बैठाकर प्रेमपूर्वक अपने आँचलसे कृष्णके शरीरका पसीना पोंछने लगीं। पुनः पंखा लहराते हुए पूछा—‘क्यों रूठा है मेरा लाला! कुछ पता तो चले।’ ‘मुझे अपना चित्र बनवाना है’ तुनककर बोले जगत्पिता बालरूप कृष्ण।

मैया यशोदाको जोरोंकी हँसी आ गयी। आज तुझे यह चित्र बनवानेकी क्या सूझी? रोज तो माखनके लिये रूठा करता था, फिर आज चित्रके लिये क्यों?

सभीके चित्र हैं हमारे भवनमें; केवल मेरा ही नहीं है, मेरे साथ यह अन्याय क्यों? मेरा भी चित्र तत्काल बनवाया जाय, सभी चित्रोंके ऊपर लगाया जाय, तभी मैं मानूँगा। अन्यथा रूठा ही रहूँगा। मचलते हुए कहा कृष्णने।

नरोत्तम कृष्ण जानते थे, मेरा रूठना न तो मैया सह सकती हैं और न नन्दबाबा। मेरे रूठे रहनेपर अवश्य ही मेरा चित्र बनवाया जायगा और चित्र बनानेके लिये मेरी प्रिय भक्ता चित्राको ही बुलाया जायगा। इस प्रकार चित्राकी मनःकामना पूर्ण की जा सकेगी। वही हुआ जो कृष्ण चाहते थे। चित्राको बुलवाया गया, वस्तुतः इसी बहाने श्रीकृष्ण चित्राको कुछ शिक्षा भी देना चाहते थे।

आज चित्राकी प्रसन्नताका ठिकाना नहीं था। वह हर्षोत्फुल्ल हो रही थी, आज वह दिन आ गया था,

जिसकी वर्षोंसे उसे प्रतीक्षा थी तथा जिस उद्देश्यसे उसने चित्रांकन-कलाको अपने जीवनयापनका माध्यम बनाया था। वह बेसुध-सी हुई नन्दभवन जानेकी तैयारीमें जुट गयी।

नन्दभवनमें बैठी हुई चित्रा कृष्णके स्वरूपक चिन्तन कर ही रही थी कि इतनेमें ही अचानक उसके जीवनाधार कृष्ण वहाँ आ पहुँचे। वे तुरंत एक छोटी-सी चौकीपर खड़े होते हुए चित्रासे बोले—‘चित्र सुन्दर बनाना, मेरी तरह ही।’ चित्रा भावविभोर हो अपलक कुछ क्षण कृष्णको निहारती रही। सुधि लौटनेपर एक हाथमें तूलिका पकड़ी और दूसरेमें चित्रपट और चाहा कि कृष्णका चित्र बनाना आरम्भ करूँ, पर यह क्या उसके हाथ शिथिल क्यों हो गये? तूलिकाको क्या हो गया, वह क्यों नहीं चलती? उसने अपने-आपको संयत किया और चित्र क्यों अंकित नहीं हो रहा है, इसका अनुसन्धान करने लगी। ओह! उसे ध्यान आया, कृष्ण तो टेढ़ा खड़ा है, कदाचित् यही कारण है जो चित्र नहीं बन पा रहा है। उसने कृष्णको आदेश दिया—‘सीधे खड़े रहो।’ कृष्णने शरारती लहजेमें कहा—‘सखी! यह कैसे सम्भव है? मैं तो हमेशासे ही नटखट और टेढ़ा हूँ, मैं क्या-क्या चीजें सीधी करूँ? मेरा मुकुट टेढ़ा, मेरी बाँसुरी टेढ़ी, मेरा नाम टेढ़ा। क्या तुम नहीं जानती मेरा एक नाम बाँकेबिहारी भी है और बाँकेका अर्थ तो टेढ़ा ही होता है न? तुम एक काम करो, मेरा टेढ़ा ही एक चित्र बना दो।’ चित्रा मन्त्रमुग्ध-सी हुई कृष्णके वचनोंको सुन रही थी। उसे ऐसा लगने लगा जैसे वह चित्रांकन करना ही भूल गयी है। जिस चित्राके हाथमें तूलिका आनेमात्रसे ही चित्र स्वयं ही बन जाया करते थे, वह आज हस्तविहीन-सी हो गयी थी। उसका शरीर रोमांचित हो थर-थर काँप रहा था। उससे कृष्णका चित्र नहीं बन रहा था। चित्रा किंकर्तव्यविमूढ़ हुई चुपचाप बैठ गयी। वह चित्र नहीं बना पानेके कारण लज्जाका अनुभव कर रही थी। उसकी आँखोंसे आँसू निकलना

तत्तद्वपुः प्रणयसे सदनग्रहाय ॥

☆ गैल में छैल के नैन के बान चुभे दिल घायल हैं गई राधा। ☆
 ☆ काम को श्याम लजाय रहे लखि के रति कायल हैं गई राधा॥ ☆
 ☆ काहू के बांधे जो नाहिं रही सोई श्याम बधायल हैं गई राधा। ☆
 ☆ प्रीति के पूत का प्रश्रय पाय कै प्रान कै पायल हैं गई राधा॥ ☆
 ☆ × × × × ☆
 ☆ नन्द के लाल हैं कृष्ण तो राधा हैं वृषभानु की गोरी लली। ☆
 ☆ रसिया अलि हैं जो साँवरे श्याम तो राधा हैं रसबोरी कली॥ ☆
 ☆ इक गोकुल गैल को छैल है तो इक है बरसाने की छोरी छली। ☆
 ☆ कवि कैसे कहै दोऊ हैं एकै कचनार हैं केशव किशोरी कली॥ ☆

साधकोंके प्रति—

[वर्णनातीतका वर्णन]

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)

[साधकको चाहिये कि वह एकान्तमें बैठकर शुद्ध वृत्तिसे इस लेखको पढ़े। केवल शब्दोंपर दृष्टि न रखकर अर्थ एवं तत्त्वकी तरफ दृष्टि रखते हुए पढ़े, पढ़कर विचार करे और विचार करके भीतरसे चुप हो जाय तो तत्त्वमें स्वतःसिद्ध स्थिरता जाग्रत् हो जायगी अर्थात् सहजावस्थाका अनुभव हो जायगा^१ और मनुष्यजीवन सफल हो जायगा।]

सत्-तत्त्व एक ही है। उस तत्त्वका वर्णन नहीं होता; क्योंकि वह मन (बुद्धि) और वाणीका विषय नहीं है— ‘यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह’ (तैत्तिरीय० २।१९), ‘मन समेत जेहि जान न बानी। तरकि न सकहि सकल अनुमानी ॥’ (रा०च०मा० १।३४१।७)। जहाँ वर्णन है, वहाँ तत्त्व नहीं है और जहाँ तत्त्व है, वहाँ वर्णन नहीं है। उस तत्त्वकी तरफ लक्ष्य नहीं है, इसलिये केवल उसका लक्ष्य करानेके लिये ही उसका वर्णन किया जाता है, परंतु जब उसका लक्ष्य न करके कोरा सीख लेते हैं, तब वर्णन-ही-वर्णन होता है, तत्त्व नहीं मिलता। उसका लक्ष्य रखकर वर्णन करनेसे वर्णन तो नहीं रहता, पर तत्त्व रह जाता है। तात्पर्य है कि उसका वर्णन करते-करते जब वाणी रुक जाती है, उसका चिन्तन करते-करते जब मन रुक जाता है, तब स्वतः वह तत्त्व रह जाता है और प्राप्त हो जाता है। वास्तवमें वह पहलेसे ही प्राप्त था, केवल अप्राप्तिका वहम मिट जाता है।

प्रकृतिजन्य कोई भी क्रिया, पदार्थ, वृत्ति, चिन्तन उस तत्त्वतक नहीं पहुँचता। प्रकृतिसे अतीत तत्त्वतक प्रकृतिजन्य पदार्थ कैसे पहुँच सकता है? अतः तत्त्वका वर्णन नहीं होता, प्रत्युत प्राप्ति होती है। उसकी प्राप्ति भी अप्राप्तिकी अपेक्षासे कही जाती है अर्थात् उसको अप्राप्त माना है, इसलिये उसकी प्राप्ति कही जाती है। वास्तवमें वह तत्त्व स्वतः सबको नित्य-निरन्तर प्राप्त है।

अप्राप्तिकी तो मान्यतामात्र है। असत्को सत् माननेसे, अप्राप्तको प्राप्त माननेसे ही वह तत्त्व अप्राप्तकी तरह दीखने लग गया। असत्को जितनी सत्ता देंगे अर्थात् महत्त्व देंगे, उतनी ही उसकी सत्ता दीखेगी और वह तत्त्व अप्राप्त दीखेगा। अप्राप्त दीखनेपर भी वह नित्यप्राप्त है अर्थात् न दीखनेपर भी तत्त्वमें कभी किंचिन्मात्र भी फर्क नहीं पड़ता। यह सिद्धान्त है कि प्राप्ति उसीकी होती है, जो सदासे प्राप्त है और निवृत्ति उसीकी होती है, जिसकी सदासे निवृत्ति है। तात्पर्य है कि मिलेगा वही, जो मिला हुआ है और बिछुड़ेगा वही, जो बिछुड़ा हुआ है। नया कुछ भी मिलनेवाला और बिछुड़नेवाला नहीं है। नया मिलेगा तो वह ठहरेगा नहीं, बिछुड़ ही जायगा।

जितने भी भेद हैं, सब-के-सब प्रकृति (असत्)-में ही हैं। तत्त्वमें किंचिन्मात्र भी कोई भेद नहीं है। जब प्राकृत पदार्थोंकी सत्ता मानते हुए उनको महत्त्व देते हुए उस तत्त्वका वर्णन करते हैं, तब वह तत्त्व केवल बुद्धिका विषय हो जाता है और उसमें भेद दीखने लग जाता है^२। सभी भेद सापेक्ष होते हैं। अपेक्षा छोड़ें तो कोई भेद नहीं रहता, एक निरपेक्ष तत्त्व रह जाता है। जैसे, दिनकी अपेक्षा रात है और रातकी अपेक्षा दिन है, पर सूर्यमें न दिन है, न रात है अर्थात् वहाँ नित्यप्रकाश है। समुद्रकी अपेक्षा तरंग है और तरंगकी अपेक्षा समुद्र है, पर जल-तत्त्वमें न समुद्र है, न तरंग है^३। ऐसे ही गुणोंकी अपेक्षासे

१-उत्तमा सहजावस्था मध्यमा ध्यानधारणा। कनिष्ठा शास्त्रचिन्ता च तीर्थयात्राऽधमाऽधमा ॥
 २-शास्त्रोंमें तत्त्वका जो वर्णन आता है, वह हमारी दृष्टिसे है। हमने असत्की सत्ता मान रखी है, इसलिये शास्त्र हमारी दृष्टिके अनुसार हमारी भाषामें असत्की निवृत्ति और सत्-तत्त्वका वर्णन करते हैं। यही कारण है कि दृष्टिभेदसे दर्शन अनेक हैं। अनेक दर्शन होते हुए भी तत्त्व एक है। जबतक द्रष्टा, ज्ञाता, दार्शनिक और दर्शन हैं, तबतक तत्त्वके वर्णनमें भेद है। जबतक भेद है, तबतक तत्त्व नहीं है, क्योंकि तत्त्वमें भेद नहीं है। दूसरे शब्दोंमें, जबतक अहम् (जड़-चेतनकी ग्रन्थि) है, तबतक भेद है। अहम्के मिटनेपर कोई भेद नहीं रहता, केवल एक तत्त्व (‘है’) रह जाता है।

३-ईश्वर और जीवके विषयमें दो तरहका वर्णन है—पहला, ईश्वर समुद्र है और मैं उसकी तरंग हूँ अर्थात् तरंग समुद्रकी है; और दूसरा, मेरा स्वरूप समुद्र है और ईश्वर उसकी तरंग है अर्थात् समुद्र तरंगका है। इन दोनोंमें तरंग समुद्रकी है—यह कहना तो ठीक दीखता है, पर

वह तत्त्व वास्तवमें अनुभवरूप है। उसको गीता ने 'स्मृति' कहा है—'नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा' (१८।७३)। स्मृति भी विस्मृतिकी अपेक्षासे है; परंतु तत्त्वकी स्मृति विस्मृतिकी अपेक्षासे नहीं है, प्रत्युत अनुभवरूप है। कारण कि स्मृतिकी तो विस्मृति हो सकती है, पर अनुभवका अननुभव (विस्मृति) नहीं हो सकता। तत्त्वकी विस्मृति नहीं होती, प्रत्युत विमुखता होती है। तात्पर्य है कि पहले ज्ञान था, फिर उसकी विस्मृति हो गयी—इस तरह तत्त्वकी विस्मृति नहीं होती^३। अगर ऐसी विस्मृति मानें तो स्मृति होनेके बाद फिर विस्मृति हो जायगी! इसलिये गीतामें आया है—'यज्ज्ञात्वा न पुनर्मोहम्' (४।३५) अर्थात् उसको जान लेनेके बाद फिर मोह नहीं होता। अभावरूप असत्को भावरूप मानकर महत्त्व देनेसे तत्त्वकी तरफसे वृत्ति हट गयी—इसीको विस्मृति कहते हैं। वृत्तिका हटना और वृत्तिका लगना—यह भी साधककी दृष्टिसे है, तत्त्वकी दृष्टिसे नहीं। तत्त्वकी तरफसे वृत्ति हटनेपर अथवा विमुखता होनेपर भी तत्त्व ज्यों-का-त्यों ही है। अभावरूप असत्को अभावरूप ही मान लें तो भावरूप तत्त्व स्वतः ज्यों-का-त्यों रह जायगा।

३-ज्ञान होनेपर नयापन कुछ नहीं दीखता अर्थात् पहले अज्ञान था, अब ज्ञान हो गया—ऐसा नहीं दीखता। ज्ञान होनेपर ऐसा अनुभव होता है कि ज्ञान तो सदासे ही था, केवल उधर मेरी दृष्टि नहीं थी। यदि पहले अज्ञान था, अब ज्ञान हो गया—ऐसा मानें तो ज्ञानमें सादिपना आ जायगा, जबकि ज्ञान सादि नहीं है, अनादि है। जो सादि होता है, वह सान्त होता है और जो अनादि होता है, वह अनन्त होता है।

अतिथिदेवो भव

(डॉ० श्रीओमप्रकाशजी वर्मा)

भारतीय संस्कृति प्रत्येक गृहस्थको यह सन्देश देती है कि अतिथिको देवतुल्य समझो। सद्गृहस्थके लिये अतिथि-सत्कार एक व्रत माना गया है। इस व्रतके पालन करते समय मन इस भावनासे ओत-प्रोत रहता है कि अतिथिके रूपमें स्वयं भगवान् हमारा उद्धार करनेके लिये आये हैं। सनातन परम्परामें गृहस्थके लिये प्रतिदिन पंचमहायज्ञका विधान है, उनमेंसे एक है—मनुष्य यज्ञ, जिसका अर्थ है अतिथि-सत्कार। शायद ही संसारकी किसी अन्य संस्कृतिमें गृहस्थके लिये अतिथिको इतना महत्त्वपूर्ण समझा गया है।

भगवान् वेदव्यास, महात्मा विदुर, महर्षि वसिष्ठ, मार्कण्डेय आदिने अतिथि-सत्कारके महत्त्वको विभिन्न भावोंमें समझाया है, जिसका सार यह है कि आये हुए अतिथिको प्रेम-भरी दृष्टिसे देखें, उसके साथ मृदु भाषण करें, बैठनेके लिये आसन दें, शीतल जल पिलायें तथा सामर्थ्यके अनुसार भोजन करायें। जब अतिथि जाने लगे कुछ दूरतक उसके साथ चलकर सम्मानपूर्वक विदा करें।

दुर्भाग्यकी बात है कि वर्तमान समयमें एकल-परिवारकी प्रवृत्ति, व्यस्त जीवन-शैली, स्वार्थपरायणता, खण्डित होते सामाजिक सम्बन्ध आदिके कारण अतिथि-सत्कारका महत्त्व लुप्त होता जा रहा है।

क्या समाजमें बढ़ती हुई इस दुष्प्रवृत्तिको रोकनेके लिये हमारे शास्त्रोंमें अतिथि-सत्कारके लिये दिये गये सन्देश कुछ सकारात्मक भूमिका निभा सकते हैं ? प्रस्तुत है इस विषयपर शास्त्र और संतोंके कुछ कथन।

❖ अतिथि-सेवा देव-सेवा ही है। उसके प्रसन्न होनेपर देवगण प्रसन्नतापूर्वक कल्याण करते हैं।

❖ अतिथि साक्षात् पिनाकधारी शिवका स्वरूप होता है, अतः सब कुछ अर्पित करके भी अतिथि की पूजा करें।

❖ जब विद्वान् और व्रती अतिथि घरपर आये तब गृहस्थको स्वयं उसकी अगुवाई करनी चाहिये। सेवकोंके ऊपर अतिथि-सेवाका कार्य नहीं छोड़ना चाहिये।

❁ जहाँ अतिथिका आदर होता है, वहाँ देवता प्रसन्न होते हैं।

❁ गृहस्थको चाहिये कि अतिथिकी निन्दा नहीं करे। अतिथि सुन्दर रूपवाला हो या कुरूप, मलिन हो या मर्ख, उसका सदैव सत्कार करना चाहिये।

❖ जिस घरसे अतिथि निराश होकर लौटता है, वह अतिथि उस गृहस्वामीको अपने पाप दे जाता है तथा गृहस्वामीके पण्य ले जाता है।

❖ अपने घरपर आते हुए बड़े या छोटेको देखकर जो छोटा बनकर नम्रता धारण करता है, वही बड़ा है।

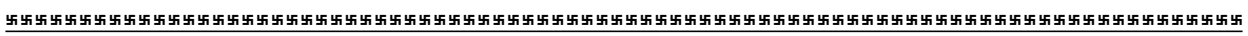
काशीमें देवियोंके मन्दिर और उनकी यात्रा

(पं० श्रीशालिग्रामजी शर्मा)

जिस प्रकारका घनिष्ठ सम्बन्ध पिण्डाण्डका ब्रह्माण्डसे है, वैसा ही घनिष्ठ सम्बन्ध काशीका समस्त भारत-वर्षसे है। हिन्दूधर्मके जितने तीर्थ हैं, जितने देवता हैं, जितने मत हैं—वे सब-के-सब काशीमें येन केन प्रकारेण अविकलरूपसे उपस्थित हैं। यद्यपि काशी त्रिपुरारि-राजनगरी है तथापि यहाँ सभी देवताओंके मन्दिर हैं और वे सब यथासमय नित्य और नैमित्तिकरूपसे माने और पूजे जाते हैं। अतः इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं कि यहाँ देवियोंके अनेक प्राचीन और अर्वाचीन मन्दिर हैं। अर्वाचीन मन्दिर हम उन्हें कहते हैं, जिनका

उल्लेख काशीखण्ड आदि प्राचीन ग्रन्थोंमें नहीं आया है। इस लघुकाय लेखमें हम प्राचीन मन्दिरोंका ही वर्णन देनेवाले हैं। यहाँ इतना ही कह देना पर्याप्त है कि इन अर्वाचीन मन्दिरोंमें भी अनेक मन्दिर बहुत अच्छे और प्रसिद्ध हैं। इनमें दशाश्वमेधकी कालीजी, संकटाघाटपर पीताम्बरा, पंचगंगाघाटपर गायत्री देवी, महाराजा अमेठीद्वारा स्थापित बालात्रिपुरसुन्दरी, रानी भवानीद्वारा स्थापित तारा देवी आदि विशेष उल्लेखके योग्य हैं।

देवियोंके प्राचीन मन्दिर जितने काशीमें हैं, उन सबका यथोचित वर्णन बिना विस्तारके असम्भव है।



इसलिये उनमेंसे चुनकर कुछ प्रधान-प्रधानका वर्णन संक्षेपसे हम नीचे देते हैं

अन्नपूर्णादेवी—यह काशीके सबसे प्रसिद्ध स्थानोंमें है। यही महागौरीके नामसे प्रसिद्ध है। इनका मन्दिर विश्वनाथजीके पास ही है। यों तो इनका दर्शन नित्य ही किया जाता है तथापि नवरात्रमें विशेषकर अष्टमीके दिन इनके दर्शनका विशेष माहात्म्य है। कार्तिक शुक्ल प्रतिपदके दिन अन्नकूट-महोत्सव भी बड़े समारोहके साथ मनाया जाता है। दर्शकोंकी अपार भीड़ उस दिन एकत्र हो जाती है।

दुर्गादेवी—यह भी बहुत प्रसिद्ध है। वह विश्वविद्यालयके मार्गपर स्थित है। मन्दिरके उत्तर ओर एक विशाल पक्का तालाब है, जो दुर्गाकुण्डके नामसे प्रसिद्ध है। नवरात्रमें, श्रावणमासमें तथा प्रति भौमवारको यहाँ मेला-सा लगा रहता है।

महालक्ष्मी—महालक्ष्मीजीका मन्दिर लक्ष्माके

समीप लक्ष्मीकुण्ड मुहल्लेमें है। इस मुहल्लेका नाम यहाँके तालाबके नामसे पड़ा हुआ है। यह तालाब लक्ष्मीजीके मन्दिरके नीचे है। भाद्र शुक्ल अष्टमीसे आश्विन कृष्ण अष्टमीतक सोलह दिवस लक्ष्मीजीका मेला होता है, जो सोरहियाके नामसे प्रसिद्ध है। इस अवसरपर बहुत-सी वस्तुओंका विक्रय होता है। मिट्टीके पात्र यहाँके बहुत प्रसिद्ध हैं।

चतुःषष्ठी—यह मन्दिर चौसट्टी घाटपर है। होलीके दूसरे दिन यहाँ बड़ा मेला होता है, उसको धुरड्डीका मेला कहते हैं। समस्त नगरके लोग उमड़ पड़ते हैं।

इनके अतिरिक्त और भी अनेक देवियोंके मन्दिर काशीमें विराजमान हैं; जैसे लक्ष्मणबालाघाटपर मंगला-गौरी, ललिताघाटपर ललितादेवी; धर्मकूपके समीप विशालाक्षी देवी इत्यादि। अब हम इनको छोड़कर कुछ देवीयात्राओंका वर्णन देते हैं। यहाँकी देवीयात्राओंमें दो यात्राएँ बहुत प्रसिद्ध हैं—

नवगौरीयात्रा तथा नवदुर्गायात्रा

नवगौरीयात्रा—यह यात्रा शुक्ल पक्ष द्वितीयाको प्रतिमास करनी चाहिये। नवगौरियोंके नाम और उनके स्थान नीचे दिये जाते हैं—

नाम—	स्थान—
(१) मुखनिर्मालिकागौरी	गायघाटके ऊपर हनुमान्जीके मन्दिरमें हैं।
(२) ज्येष्ठागौरी	कर्णघण्टा मुहल्लेमें ज्येष्ठेश्वर महादेवके समीप।
(३) सौभाग्यगौरी	विश्वनाथजीके मन्दिरमें।
(४) शृंगारगौरी	विश्वनाथजीके मन्दिरमें।
(५) विशालाक्षीगौरी	मीरघाटपर।
(६) ललितागौरी	ललिताघाटपर।
(७) भवानीगौरी	कालिकागलीमें।
(८) मंगलागौरी	लक्ष्मणबालाघाटपर।
(९) महालक्ष्मी	लक्ष्मीकुण्डपर।

नवदुर्गायात्रा—यह यात्रा नवरात्रके नौ दिनोंमें क्रमसे की जाती है। नवों दुर्गाओंके नाम तथा स्थान नीचे दिये जाते हैं—

नाम—	स्थान—
(१) शैलपुत्री	अलईपुर स्टेशनके उत्तर वरणा नदीके तटपर स्थित है।
(२) ब्रह्मचारिणी	दुर्गाघाटपर।
(३) चन्द्रघण्टा	चौकके पूर्व एक गलीमें।
(४) कूष्माण्डदुर्गा	दुर्गाकुण्डपर प्रसिद्ध दुर्गाजी।
(५) स्कन्दमाता	जैतपुराके समीप बाघेश्वरीके नामसे प्रसिद्ध हैं।
(६) कात्यायनी	संकटाघाटके पास आत्म-वीरेश्वरके मन्दिरमें।
(७) कालरात्रि	कालिकागलीमें।
(८) महागौरी	यही अन्नपूर्णाजीके नामसे प्रसिद्ध हैं।
(९) सिद्धिदात्री	सिद्धमाताकी गलीमें अथवा सिद्धेश्वरीमहालमें।

इसके अतिरिक्त और भी अनेक देवीयात्राएँ काशीमें हैं, किंतु वे इतनी प्रसिद्ध नहीं हैं।

महारसायन

(श्रीसीतारामदासजी ओंकारनाथ)

‘राम-राम सीताराम! मैं दिन-रात नाम-रसायन पान करना चाहता हूँ। मैं निश्चय कर चुका हूँ, कि नाम लेनेसे सर्वार्थ-सिद्धि होगी। यह मेरा दृढ़ सिद्धान्त हो गया है कि मेरे-जैसे क्षुद्र जीवके लिये नामके अतिरिक्त और कोई गति नहीं है। यही मार्ग मैंने पकड़ा है और इसी मार्गपर चल रहा हूँ। जिससे पथभ्रष्ट न हो जाऊँ, इसीलिये मैंने शक्ति-प्रार्थना करना सीखा है। फिर भी हे राम! मैं प्रतिक्षण नाममें तल्लीन नहीं रह सकता। न जाने मेरा कौन-सा कर्मफल मुझे नाम लेनेसे हटा देना चाहता है। तुम कृपा करो—मुझे निरन्तर अपने नाममें डुबाये रखो। हे यदुनाथ! हे रघुनाथ! हे ब्रजनाथ! हे सीतानाथ! हे दीननाथ! हे प्राणनाथ! ऐसा करो कि मैं सदा-सर्वदा नाम लेकर रह सकूँ, मुझे अपना बना लो।’

‘सर्वे नश्यन्ति ब्रह्माण्डे प्रभवन्ति पुनः पुनः।

न मे भक्ताः प्रणश्यन्ति निःशङ्काश्च निरापदः॥

कोई डर नहीं है! मेरे भक्तका कभी नाश नहीं होता। सब नाश हो जायगा, परंतु मेरा भक्त निःशंक और निरापद अवस्थामें रहेगा। देखो, जीवको तभीतक सोचना पड़ता है जबतक कि वह दृढरूपसे मेरा आश्रय नहीं ले लेता। मैं तुम्हारा हूँ—यह कहकर मेरे शरण आ जानेपर सदाके लिये सारी चिन्ताएँ समाप्त हो जाती हैं। एक बार निरुपाय होकर, मैं तुम्हारा हूँ, यह कहकर मेरे शरण आनेपर मैं सब भूतोंको अभय देता हूँ। तुम क्यों डर रहे हो? तुम्हें किसी प्रकारका भय नहीं है। मैं तुम्हारे मार्गको साफ करता हुआ आगे-आगे चल रहा हूँ, तुम नाम लेते हुए मेरे पीछे-पीछे चले आओ। मेरे भक्त, मनुष्यकी तो बात ही क्या, यमराजतकका भी भय नहीं करता।

भर्जनं भवबीजानामर्जनं सुखसम्पदाम्।

तर्जनं यमदूतानां राम रामेति गर्जनम्॥

चले आओ—राम-रामका गर्जन करते हुए तुम चले आओ। जिस कर्मबीजके कारण तुम्हारा पुनः-पुनः जन्म होना नहीं बन्द होता है, वही कर्मबीज, राम-रामके गर्जनसे जल जायगा, तुम्हारे न चाहनेपर भी राम-रामके गर्जनसे संसारकी सुख-सम्पदा तुम्हारे पैरोंपर लोटने लगेगी और क्या होगा जानते हो? राम-रामके गर्जनसे यमदूतोंका भी तिरस्कार होता है। वे राम-रामके गर्जनसे डरकर तुम्हारे पास नहीं आ सकेंगे। तुम राम-राम भजो। केवल नाम लो। नाम लो—चाहे अवहेलनासे लो, श्रद्धासे लो, भक्तिपूर्वक लो, अभक्तिसे लो, खड़े-खड़े लो, बैठकर लो, लेते हुए लो, चलते हुए लो, भोजन करते हुए लो, सुखमें लो, दुःखमें लो, हर्षमें लो, विषादमें लो, अभावमें लो, सम्पन्नावस्थामें लो, रोगमें लो, नीरोगमें लो, शोकमें लो, विशोकमें लो, चंचलतामें लो, स्थिरतामें लो, स्वजनमें लो, विजनमें लो, प्रकाशमें लो, अन्धकारमें लो, विक्षेपमें लो, अविक्षेपमें लो, लयमें लो, अलयमें लो। बस, सब समय सभी स्थितियोंमें रामका नाम लो। फिर अब जो द्वन्द्व देखते हो, वह कुछ भी नहीं रहेगा। रहेगा केवल नाम। अधिकसे क्या आवश्यकता? अब आरम्भ करो।’

‘ठीक है, यही करूँगा, तुम्हारा नाम ही लूँगा—
‘राम राम जय राम।’

निन्दन्तु बान्धवाः सर्वे त्यजन्तु स्त्रीसुतादयः।

जना हसन्तु मां दृष्ट्वा राजानो दण्डयन्तु वा॥

सेवे सेवे पुनः सेवे त्वामेव परदेवते।

त्वत्कर्म नैव मुञ्चामि मनोवाक्कायकर्मभिः॥

रघुपति राघव राजा राम। पतित पावन सीताराम॥

जासु नाम भव भेषज हरन घोर त्रय सूल। सो कृपाल मोहि तो पर सदा रहउ अनुकूल॥

जिनका नाम जन्म-मरणरूपी रोगकी [अव्यर्थ] औषध और तीनों भयंकर पीड़ाओं (आधिदैविक, आधिभौतिक

और आध्यात्मिक दुःखों) को हरनेवाला है, वे कृपाल श्रीरामजी मुझपर और आपपर सदा प्रसन्न रहें।

Hinduism Discord Server <https://discord.gg/hnam> | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

हिन्दू संस्कृतिमें जलके प्रति पूज्य भाव

(वैद्य श्रीबालकृष्णाजी गोस्वामी)

‘अमृत’ संज्ञाधारी जल पंचभूतोंका मुख्य घटक है। सम्पूर्ण सृष्टिकी उत्पत्ति एवं स्थिति जलसे ही सम्भव है। हमारे शरीरका ७० प्रतिशत भाग जल ही है। भारतीय धर्म एवं संस्कृतिमें प्रत्येक पर्व, उत्सव एवं अनुष्ठानमें निकटस्थ नदी, सरोवर एवं निर्झरमें स्नान करनेकी प्रथा है। जलको पृथ्वीका प्रधान रत्न माना गया है—

पृथिव्यां त्रीणि रत्नानि जलमन्नं सुभाषितम्।

मूढैः पाषाणखण्डेषु रत्नसंज्ञा विधीयते॥

अर्थात् ‘पृथ्वीपर जल, अन्न एवं मीठी वाणी—ये तीन ही रत्न हैं। मूढ़ व्यक्ति ही पत्थरके टुकड़ोंको रत्नके नामसे पुकारते हैं।’

सनातन धर्ममें प्रत्येक कार्य करनेके पूर्व जलसे स्नान करनेका विधान है। सहस्र कार्य छोड़कर पहले स्नान करनेका शास्त्रीय निर्देश है—‘शतं विहाय भोक्तव्यं सहस्रं स्नानमाचरेत्।’ इसी प्रकार सन्ध्या, दान, देवपूजन, पितृपूजन तथा अन्य कोई सत्कार्य करनेसे पूर्व आचमन करनेका विधान है। आचमनसे स्वयंकी शुद्धि तो होती ही है साथ ही ब्रह्मासे लेकर तृणतक सभी तृप्ति प्राप्त करते हैं—

एवं स ब्राह्मणो नित्यमुपस्पर्शनमाचरेत्।

ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तं जगत् स परितर्पयेत्॥

(व्याघ्रपाद)

स्नान एवं सन्ध्या आदि धार्मिक कार्योंके पूर्व संकल्प करना आवश्यक है। इस प्रक्रियामें जलको दायें हाथमें लेकर संकल्प किया जाता है। वस्तुतः जलको देवता मानकर उसके साक्ष्यमें की गयी प्रतिज्ञा ही संकल्प है। पवित्रताकी दृष्टिसे सापेक्षतः कुँएके जलसे झरनेका, झरनेके जलसे सरोवरका, सरोवरके जलसे नदीका, नदीके जलसे तीर्थका एवं गंगाका जल तो सबसे अधिक श्रेष्ठ होता है—

भूमिष्ठमुद्धृतात् पुण्यं ततः प्रस्त्रवणोदकम्।

ततोऽपि सारसं पुण्यं तस्मान्नादेयमुच्यते।

तीर्थतोयं ततः पुण्यं गाङ्गं पुण्यन्तु सर्वतः॥

(अग्निपुराण १५५।५-६)

जल महाभूतके गुण-कर्मोंका आयुर्वेदके ग्रन्थोंमें निम्न रूपमें उल्लेख किया गया है—

द्रवस्निग्धशीतमन्दमृदुपिच्छिलरसगुणबहुलान्याप्यानि,

तान्युपक्लेदस्नेहबन्धविष्यन्दमार्दवप्रह्लादकराणि ।

(च० सूत्र० २६।११)

आप्यास्तु—‘रसो रसेन्द्रियं सर्वद्रवसमूहो गुरुता शैत्यं स्नेहो रेतश्च।’ (सुश्रुत)

इन कथनोंका तात्पर्य यह है कि जल महाभूत प्रधान द्रव्य शरीरमें द्रवत्व उत्पन्न करनेवाले, स्निग्ध, शीत, मृदु, पिच्छिल, गुरु, खर, सान्द्र, स्तम्भ, किंचित् कषाय एवं लवणरसयुक्त, परंतु मुख्यत्वेन मधुर रसवाले तथा रस गुणवाले होते हैं। जलका उपयोग करनेसे शरीरमें क्लेद, स्निग्धता, बन्ध, द्रवस्त्राव, मृदुता तथा शरीर, मन और इन्द्रियोंकी तुष्टि होती है।

वैशेषिकोंने जल महाभूतके दो रूप माने हैं— परमाणु रूप एवं स्थूल रूप। सांख्य दर्शनमें परमाणु रूपको तन्मात्रा एवं स्थूल रूपको महाभूत कहा गया है।

स्नानका महत्त्व शास्त्रोंमें अनेक स्थानोंपर प्रतिपादित किया गया है। स्नानसे रूप, तेज, बल, पवित्रता, आयु, आरोग्य, निर्लोभता, दुःस्वप्ननाश, तप और मेधा—ये दश गुण प्राप्त होते हैं—

गुणा दश स्नानपरस्य साधो! रूपं च तेजश्च बलं च शौचम्।

आयुष्यमारोग्यमलोलुपत्वं दुःस्वप्ननाशश्च तपश्च मेधा॥

स्नानान्तर सन्ध्या, देवतर्पण, ऋषितर्पण एवं पितृतर्पण भी जलसे ही किये जाते हैं। महर्षि अत्रिने कहा है कि नित्य सन्ध्या करनेसे अज्ञानवश किये गये विकर्म नष्ट हो जाते हैं। सन्ध्या करनेवाला पापरहित होकर सनातन ब्रह्मलोकको प्राप्त होता है। सन्ध्यामें पवित्रीकरणहेतु

इस प्रकार हिन्दू संस्कृतिमें जलका महत्त्व अतुलनीय है। सनातन धर्मकी जलसे घनिष्ठता चिरंतन एवं नैतिक है। इसी कारण संस्कृत भाषामें जलको अमृत, पय, जीवन, भुवन, पुष्कर, सर्वतोमुख, क्षीर, नीर, तोय आदि नामोंसे सम्बोधित किया गया है।

भगवद्गीता-विज्ञान

[भगवद्गीताके वैज्ञानिक स्वरूपको बताता आलेख]

(श्रीसुमितचन्द्रजी श्रीवास्तव, एम० एस-सी०)

इस सृष्टिमें तीन सबसे रहस्यमय घटनाएँ हैं— जीवन, जीवनकी उत्पत्ति और जीवनकी मृत्यु। इन तीन घटनाओंको विज्ञान आजतक नहीं बता पाया। जीवन और जीवनकी उत्पत्तिके विषयमें कुछ मत तो हैं, पर मृत्युके विषयमें कुछ भी नहीं है; क्योंकि विज्ञानकी कुछ सीमाएँ हैं, जैसे न तैरना जाननेवालेकी सीमा नाव ही है, वह नदीमें नहीं जा सकता।

विज्ञानकी सीमाओंको तोड़ती है 'भगवद्गीता' जो लगभग प्रत्येक हिन्दू घरके पूजागृहमें होती है और पूजा-योग्य मानी जाती है, पर क्या ये केवल हिन्दुओंके लिये है? नहीं, ये प्रत्येक मानवके लिये है। किसी भी मानवके जीवनका स्वरूप क्या होना चाहिये बताती है— भगवद्गीता।

मनुष्यकी बुद्धिकी सीमा है। वह बड़े एवं छोटे और शुरु और अन्तके बीच ही सब कुछ समझती है, इसलिये इन्हींके बीच विज्ञान समाया है। मृत्युके बाद क्या होता है, नया जन्म कैसे होता है—ये सब बातें हमें बुद्धिकी क्षमता और सीमा बढ़ाकर ही पता चलेंगी, परंतु जो बातें बुद्धिकी सीमाके अन्दर हैं, उन्हें विज्ञानकी कसौटीपर कसा जा सकता है। सचमुच ये चौंकानेवाली बात है कि जो नियम भौतिक विज्ञानकी जड़ है, उसे श्रीकृष्णने तर्कसंगत रूपसे ५ हजार साल पहले बताया था और उसे हम भौतिक विज्ञानमें ऊष्मागतिकीका नियम कहते हैं। ऊष्मागतिकीके नियमको गीताके ज्ञानकी कसौटीपर कसते हैं तो जो तथ्य प्राप्त होते हैं, वे ये हैं—

ऊष्मागतिकीका प्रथम नियम ऊर्जा संरक्षणका नियम है और श्रीकृष्णका आत्माकी अमरताका नियम भी यही कहता है। ऊष्मागतिकीका प्रथम नियम कहता है कि 'ऊर्जा न तो उत्पन्न की जा सकती है और न ही नष्ट। ये केवल स्वरूप बदलती है।' जैसे पंखेमें वैद्युत ऊर्जा गतिज ऊर्जामें परिवर्तित होकर हमें हवा देती

है, पर नष्ट नहीं होती। ऊष्मागतिकीका ये नियम ऊर्जाके सभी रूपोंके लिये लागू होता है। ये विभिन्न रूप हैं गतिज ऊर्जा, स्थितिज ऊर्जा, वैद्युत ऊर्जा आदि।

आत्मा नाम सुनकर बहुत लोगोंको डर लगता है, पर ये भी ऊर्जाका एक रूप है, जो हमें निर्जीव चीजोंसे अलग करता है। इसी ऊर्जासे हम जीवित हैं, ये नहीं तो हम निर्जीव, जैसे एक खिलौनेसे सेल या बैटरी निकाल दें तो वह नहीं चलेगा; क्योंकि उसकी ऊर्जाका स्रोत निकल जाता है। अतः आत्मा एक ऊर्जा है और इसी ऊर्जाके संरक्षणका नियम श्रीकृष्णने दिया 'आत्मा (ऊर्जा)—को न अग्नि जला सकती है, न जल गला सकता है, न वायु सुखा सकती है अर्थात् ऊर्जाको नष्ट नहीं किया जा सकता। ये केवल शरीर बदलती है अर्थात् स्वरूप बदलती है। ऊपर ऊष्मागतिकीके प्रथम नियमपर दृष्टि डालिये, क्या ये दोनों नियम एक नहीं? अवश्य एक हैं फिर भी श्रीकृष्णके इस नियमको भौतिक विज्ञानमें स्थान प्राप्त नहीं।

ऊष्मागतिकीका द्वितीय नियम कहता है कि प्रत्येक तन्त्र ऊर्जा मुक्त करता है ताकि वह सन्तुलित अवस्थामें आ जाय। तन्त्रसे तात्पर्य उस व्यवस्थासे है, जिसमें प्रत्येक भाग मिलकर कार्य करते हैं। जैसे हमारा शरीर एक तन्त्र है, कम्प्यूटर एक तन्त्र है, ये ब्रह्माण्ड भी एक तन्त्र है।

ऊष्मागतिकीका द्वितीय नियम यही कहता है कि प्रत्येक तन्त्र जितनी ज्यादा ऊर्जा मुक्त करता है, उतनी ही स्थायी अवस्थामें आता है और इसीके साथ ही तन्त्रमें लचीलापन आता है।

ऊष्मागतिकीका द्वितीय नियम और श्रीकृष्णका कर्मका नियम। श्रीकृष्णने गीतामें कहा है निष्काम कर्मद्वारा ही मुक्ति प्राप्त होती है और जीवन सार्थक होता है और इसीको आगे कहा शरीरका प्रथम कर्तव्य ही कर्म करना है।

सूडानमें गोमाताकी पूजा-अर्चना

पीड़ित हो उठती है। हम सचाईको ढूँढ़ना चाहते हैं। असत् व्यवहार बालकके स्वभावके प्रतिकूल है। बालकका जीवन सद्भावनामय होता है, अतएव उसका दर्शनमात्र मनुष्यको पवित्र करता है।

हम अपने मित्रों और संसारके व्यक्तियोंमें जो बहुत शिष्टाचार पाते हैं। वह प्रायः छलमय होता है। हम स्वयं इसी प्रकारका छलमय व्यवहार संसारमें करते हैं। इसी प्रकारके व्यवहारसे हमारा हृदय आक्रान्त हो उठता है। बालकके हृदयमें कपट-व्यवहारके लिये स्थान नहीं। अतएव वह सदा आनन्दसमुद्रमें निमग्न रहता है।

मनुष्यकी सभ्यताका दूसरा नाम छल है। सभ्यता कपट-व्यवहारका विकसित रूप है। रूसो महाशयने अपने एक लेखमें यही दिखलाया है कि जैसे-जैसे सभ्यता बढ़ती जाती है, मनुष्यके सदाचारका नाश होता है। जो मनुष्य जितना सभ्य और शिष्ट कहलाता है, वह प्रायः उतना ही असद्व्यवहार करनेवाला और धूर्त होता है।

रूसोका दृष्टिकोण महात्माओं, कवियों और तत्त्वज्ञानियोंका दृष्टिकोण है। कवि सरल-हृदय होता है। कविता गंगाजीकी पवित्र धाराके समान कविके हृदयरूपी स्वच्छ मानसरोवरसे निकलती है। कविता दलदलकी उपज नहीं, संसारके आघात-प्रतिघातसे विकृत बुद्धि कविताका उद्गमस्थान नहीं बन सकती। सरलता, सहानुभूति और सद्व्यवहार—सबका स्रोत एक है। सरलता महात्माओंका गुण है, सहानुभूति कवियोंका

और सद्व्यवहार तत्त्वज्ञानियोंका। वास्तवमें तीनों गुण एक ही तत्त्वके भिन्न-भिन्न नाम हैं।

मनुष्य चतुर बनकर कुछ भी स्थायी लाभ प्राप्त नहीं कर पाता। चतुर मनुष्य सांसारिक व्यवहारमें कुशल होता है, किंतु वह आत्मज्ञानसे वंचित रहता है। इस प्रकारके मनुष्यसे उसके आसपास रहनेवाले लोग भयातुर अवश्य रहते हैं, किंतु वह प्रेमका पात्र नहीं हो पाता। ऐसे मनुष्यके हृदयमें किंचिन्मात्र भी आनन्द नहीं रहता। वह जहाँ जाता है, वहीं अपने आसपासके व्यक्तियोंमें शंका, भय और चिन्ताका संसार निर्माण कर देता है। जिस तरह बालक अपनी सरलतासे आसपासके लोगोंको सन्तुष्ट करता है, जिस प्रकार एक-एक खिला हुआ फूल देखनेवालोंके मनको खिला देता है, उसी प्रकार सरल स्वभाववाला आदमी सदा अपने-आप प्रसन्न रहता है और उस प्रसन्नताका दान दूसरोंको भी दिया करता है। इसके विपरीत चतुर मनुष्य दूसरे लोगोंको चतुर बनाता है और इस तरह उनके हृदयको संकुचित और कपटसे कलुषित कर देता है। अंगरेजीमें एक कहावत है—‘स्वास्थ्य उतना ही संक्रामक है, जितनी कि बीमारी।’ बीमार आदमी सबमें बीमारी फैलाता है और स्वस्थ मनुष्य स्वास्थ्य। इसी तरह जिस मनुष्यका जीवन संसारमय है, वह अपने सम्पर्कसे दूसरोंको संसारी बनाता है और जिसका जीवन परमार्थमें लगा हुआ है, वह दूसरोंके मनमें भी परमार्थकी भावनाको दृढ़ करता है।

सूडानमें गोमाताकी पूजा-अर्चना

दक्षिणी सूडानकी मुंदारी प्रजातिके आदिवासी गाय और बैलोंसे बहुत प्यार करते हैं और उन्हें अपने परिवारका हिस्सा मानते हैं। गायकी पूजा करते हैं और उन्हें अपने परिवारका हिस्सा मानते हैं। गायकी पूजा करना और उनकी देखभाल करना ही उनका एकमात्र काम है।

मुंदारी जनजातिके लोग गोमूत्रसे नहाते हैं, क्योंकि उन लोगोंका मानना है कि ऐसा करनेसे उनके शरीरमें कोई रोग नहीं होता। साथ ही त्वचा हल्के नारंगी रंगकी हो जाती है जो कि उनके लिये अच्छा है। यहाँ गायकी पूजा करते हैं। उनका मानना है कि गाय ही उनके जीवनको बचा सकती है। वे बैलोंसे खेती करते हैं। उन्होंने अपनी गायोंकी नस्लमें कोई बदलाव नहीं होने दिया है।

संत-चरित—

भक्त श्रीगणेश योगीन्द्र

(पं० श्रीदामोदर प्रह्लादजी पाठक, शास्त्री)

वर्तमान गाणपत्य सम्प्रदायके अनुयायियोंके मूलपुरुष एवं गुरुतुल्य विप्रवर गणेश योगीन्द्र ही हैं। ये महात्मा प्रख्यात मुद्गलमुनिके अवतार माने जाते हैं।

इनके पवित्र वंशमें प्रायः सभी उद्भट विद्वान् और गाणपत्य थे। इनके पितामह विप्र सोमनाथ गुजरातमें सोरटी सोमनाथके आंबी-नामक गाँवमें रहते थे। सोमनाथ विद्वान्, धर्मात्मा एवं तेजस्वी ब्राह्मण थे। इनकी सहधर्मिणी उमादेवी भी पतिपरायणा एवं धर्मानुरागिणी थीं। इनके चिन्तामणि और मोरेश्वर नामक दो सुयोग्य पुत्र उत्पन्न हुए। दोनों पुत्र वेद-शास्त्रोंके विद्वान् थे।

एक दिन स्वप्नमें धर्मात्मा सोमनाथसे शृंगेरीमठकी अधिष्ठात्री देवी शारदाने कहा—‘शृंगेरीमठके यति मरणासन्न हैं। उक्त पदका दायित्व सँभालनेके लिये तुम अपने ज्येष्ठ पुत्र चिन्तामणिको वहाँ भेज दो।’

सोमनाथ पत्नी और पुत्रोंसहित शृंगेरी पहुँचे। वहाँ पीठस्थ यति नृसिंहाश्रमाचार्यने भी ऐसा ही स्वप्न देखा था। उन्होंने ब्राह्मण सोमनाथात्मज चिन्तामणिको संन्यासकी दीक्षा देकर उन्हें उक्त पवित्र पीठपर नियुक्त कर दिया।

सोमनाथ अपनी सहधर्मिणी और पुत्र मोरेश्वरके साथ आम्बी लौट आये। मोरेश्वर सविधि गृहस्थ हुए, किंतु अधिक दिन व्यतीत होनेपर भी उनके कोई संतान नहीं हुई। पौत्र-मुख देखे बिना ही सोमनाथ और उनकी पत्नी उमादेवीका यथासमय शरीरान्त हो गया।

आचार्यपीठस्थ चिन्तामणि आचार्यने अद्वैतसिद्धान्तकी स्थापनामें सहयोग प्राप्त करनेके लिये विद्वान् मोरेश्वरको शृंगेरी बुलाया। मोरेश्वरने उनकी आज्ञाका पालन किया। उन्होंने विरुद्ध मतोंका खण्डनकर चिन्तामणि योगीन्द्राचार्यकी बड़ी सहायता की। तदनन्तर वे आम्बी लौट आये।

विद्वान् मोरेश्वर वंश-परम्पराकी रक्षाके लिये चिन्तित थे। वे सपत्नीक महाराष्ट्रके जाग्रत् गणेश-पीठ मोरगाँव जाकर मयूरेश्वरकी उपासना करने लगे। एक मासतक निरन्तर उपासनाकर वे पुनः आम्बी आ गये। भगवान् मयूरेश्वरके अनुग्रहसे उनकी धर्मपत्नीने श्रावणशुक्ल ५ शकाब्द १४९९ में पुत्र-प्रसव किया। शृंगेरीपीठस्थ आचार्य चिन्तामणिके अनुज गणेशोपासक विद्वान् पं० मोरेश्वरका

यही पुत्र श्रीगणेश योगीन्द्राचार्यके नामसे प्रख्यात हुआ।

श्रीगणेश परम ज्ञान-पिपासु थे। उपनयनके अनन्तर उन्होंने सर्वप्रथम अपने पिता और फिर विनायकशास्त्री-नामक गुरुके चरणोंमें बैठकर वेदादि शास्त्रोंका ज्ञान प्राप्त किया। इसके अनन्तर उन्होंने प्रसिद्ध विद्वानोंके पास जाकर बड़े परिश्रमसे षट्शास्त्र, स्मृति, इतिहास, पुराण, ज्यौतिष और योग आदि समस्त शास्त्रोंका सविधि अध्ययन कर लिया। घर लौटनेतक उनके हेरम्ब नामक एक अनुज भी हो गया था।

समस्त शास्त्रोंके प्रकाण्ड विद्वान् श्रीगणेश विद्यासे तृप्त नहीं थे। उन्होंने अपने पिताके चरणोंपर मस्तक रखकर अत्यन्त श्रद्धापूर्वक विनीत वाणीमें निवेदन किया—‘पिताजी! आपने स्वानन्द-गणेशकी कृपाका जो अलौकिक आनन्द प्राप्त किया, उस आनन्दकी प्राप्तिके लिये आप मुझपर दया कीजिये।’

गणेश-भक्त पिताने पुत्रकी पवित्र कामनासे प्रसन्न होकर पहले तो उससे आवश्यक शास्त्रोक्त तपश्चर्या करवायी, तदनन्तर उसे श्रीगणेश-मन्त्रकी दीक्षा दे दी।

श्रीगणेश-मन्त्र प्राप्त हो जानेपर गणेशने सविधि अनुष्ठान प्रारम्भ किया। उनकी श्रद्धा-भक्तिसे प्रसन्न होकर गजमुखने प्रकट होकर कहा—‘वर माँगो।’

परम भक्त गणेशने अपने आराध्य गजवक्त्रसे याचना की—‘मुझे आपके चरणोंकी सुदृढ़ भक्ति प्राप्त हो।’ (मुद्गलमुनिने भी भगवान् गणेशके सम्मुख यही इच्छा व्यक्त की थी।)

परमप्रभु गजाननने कहा—‘आर्यधरापर गणेश-मार्ग लुप्तप्राय है। तुम उक्त भक्ति-योगप्रधान मार्गकी स्थापना करो। तुम शृंगेरी जाकर अपने ज्येष्ठ पितृव्य चिन्तामणि योगीन्द्रसे संन्यासकी दीक्षा लेकर पुनः इस भूस्वानन्द-क्षेत्रमें मेरे समीप आकर अनवरतरूपमें लोकोद्धारका कार्य करते रहो।’

भगवान् मयूरेश्वरने अपना प्रसाद-मोदक भक्त गणेशके मस्तकपर रखा और अदृश्य हो गये। उक्त दुर्लभतम प्रसादके ग्रहण करते ही भक्त गणेशका सम्पूर्ण शरीर अत्यन्त कान्तिमान् हो गया।

प्रेरक कथा—

आदर्श बी०ए० बहू

(पं० श्रीरामनरेशजी त्रिपाठी)

बात न पुरानी है, न सुनी हुई कहानी है। कानसे ज्यादा आँखें जानती हैं। कहानीके सभी पात्र वास्तविक हैं; अतएव नाम बदलकर ही कहना होगा।

एक रिटायर्ड जज हैं। कहा जाता है कि उन्होंने कभी रिश्वत नहीं ली थी। धार्मिक विचारोंके सद्-गृहस्थ हैं। दावतोंमें, पार्टियोंमें, मित्रोंके यहाँ खान-पानमें वे चाहे जितने स्वतन्त्र रहे हों, पर घरके अन्दर रसोई-घरकी रूढ़ियोंके पालनमें न असावधानी करते थे, न होने देते थे।

गृहिणी शिक्षिता हैं; सभा-सोसाइटियोंमें, दावतोंमें पतिके साथ खुलकर भाग लेती रही हैं; पर घरके अन्दर चूल्हेकी मर्यादाका वे पतिसे भी अधिक ध्यान रखती हैं। तुलसीको प्रत्येक दिन सबेरे स्नान कराके जल चढ़ाना और सन्ध्या समय उसे धूप-दीप देना और उसके चबूतरेके पास बैठकर कुछ देर श्रीरामचरितमानसका पाठ करना—यह उनका नियमित काम है, जो माता-पितासे विरासतकी तरह मिला है और कभी छूट नहीं सकता।

जज साहबके कोई पुत्र नहीं; एक कन्या है। जिसका नाम लक्ष्मी है। माता-पिताकी एक ही संतान होनेके कारण उसे उनका पूर्ण स्नेह प्राप्त था। लक्ष्मीको भगवानने सुन्दर रूप दिया है।

लक्ष्मीको खर्च-बर्चकी कमी नहीं थी। युनिवर्सिटीमें पढ़नेवाली साथिनोमें वह सबसे अधिक कीमती और आकर्षक वेष-भूषामें रहा करती थी। वह स्वभावकी कोमल थी, सुशील थी, घमण्डी नहीं थी। घरमें आती तो माँके साथ मेमनेकी तरह पीछे-पीछे फिरा करती थी। माँकी इच्छासे वह तुलसीके चबूतरेके पास बैठकर तुलसीकी पूजामें भी भाग लेती और माँसे अधिक देरतक बैठकर मानसका पाठ भी किया करती थी। भारतीय संस्कृति और युनिवर्सिटीकी रहन-सहनका यह अदभुत मिश्रण था।

जज साहबकी इच्छा थी कि लक्ष्मी बी०ए० पास कर ले, तब उसका विवाह करें। वे कई वर्षोंसे सुयोग्य वरकी खोजमें दौड़-धूप कर रहे थे। बी०ए० कन्याके लिये एम०ए० वर तो होना ही चाहिये; पर कहीं एम०ए० वर मिलता तो करूप मिलता; कहीं भयंकर खर्चीली

जिन्दगीवाला पूरा साहब मिलता; कहीं दहेज इतना माँगा जाता कि रिश्त न लेनेवाला जज दे नहीं सकता। कन्याके पिताको जज, डिप्टी कमिश्नर, डिप्टी कलक्टर आदि शब्द कितने महँगे पड़ते हैं; यह वे ही जान सकते हैं।

लक्ष्मीने बी०ए० पास कर लिया और अच्छी श्रेणीमें पास किया। अब वह पिताके पास परायी थातीकी तरह हो गयी। अब उसे किसी नये घरमें बसा देना अनिवार्य हो गया। जज साहब वर खोजते-खोजते थक चुके थे और निराश होकर पजा-पाठमें अधिक समय लगाने लगे थे।

मनुष्यके जीवनमें कभी-कभी विचित्र घटनाएँ घट जाती हैं। क्या-से-क्या हो जाता है; कुछ पता नहीं चलता। एक दिन शहरकी एक बड़ी सड़कपर जज साहब अपनी कारमें बैठे थे। इंजनमें कुछ खराबी आ गयी थी, इससे वह चलता नहीं था। ड्राइवर बार-बार नीचे उतरता, इंजनके पुरजे खोलता-कसता; तार मिलाता, पर कामयाब न होता। उसने कई साधारण श्रेणीके राह-चलतोंको कहा कि वे कारको ढकेल दें, पर किसीने नहीं सुना। सूट-बूटवालोंको कहनेका उसे साहस ही नहीं हुआ। एक नवयुवक, जो बगलसे ही जा रहा था और जिसे बुलानेकी ड्राइवरको हिम्मत भी न होती, अपने-आप कारकी तरफ मुड़ पड़ा और उसने ड्राइवरको कहा—‘मैं ढकेलता हूँ, तम स्टेयरिंग पकड़ो।’

डाइवरने कहा—‘गाड़ी भारी है, एकके मानकी नहीं।’

युवकने मसकराकर कहा—देखो तो सही।

ड्राइवर अपनी सीटपर बैठ गया। युवकने अकेले ही गाडीको दरतक ढकेल दिया। इंजन चलने लगा।

जज साहबने युवकको बुलाया, धन्यवाद दिया। युवकका चेहरा तप्त कांचनकी तरह चमक रहा था। चेहरेकी बनावट भी सुन्दर थी। जवानी अंग-अंगसे छलकी पड़ती थी। फिर भी पोशाक बहुत सादी थी—धोती, कुरता और चप्पल। चप्पल बहुत घिसी-घिसाई थी और धोती तथा कुरतेके कपड़े भी सस्ते किस्मके थे। फिर भी आँखोंकी ज्योति और चेहरेपर गम्भीर भावोंकी झलक देखकर जज साहब उससे कुछ बात किये बिना रह नहीं सके।

इंजन चल रहा था, डाइवर आज्ञाकी प्रतीक्षामें था।

बहूको सीना-पिरोना अच्छा आता था, हारमोनियम बजाना और गाना भी आता था। कण्ठ सुरीला था, नम्रता

Hinduism Discord Server <https://dsc.gg/charma> | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

गुमाश्तेका पत्र पाकर जज साहबने गृह-प्रवेशकी साइट पूछी और गुमाश्तेको लिखा कि साइटके दिन मैं, लक्ष्मीकी माँ और उसके पति भी आ जायँगे। एक हजार व्यक्तियोंको भोजन करानेकी पूरी तैयारी कर रखो।

यह श्रीरामचरितमानसका चमत्कार है, जिसने चुपचाप लक्ष्मीके जीवनमें ऐसा प्रकाश-पुंज भर दिया।



मानव जीवनमें गुण-दोष

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)

स्वभावतः कोई भी व्यक्ति अपनेको अपनी दृष्टिमें भला ही देखना चाहता है, पर भलाई करके तो हम भले होते नहीं—भले होते हैं अपने जीवनमेंसे जानी हुई बुराइयों (दोषों)—का त्याग करनेसे। अपने जीवनमेंसे जानी हुई बुराइयोंको निकाल देनेपर भला बननेके लिये कुछ करना नहीं पड़ता, हम स्वतः भले बन जाते हैं। निर्दोषतामें हमारे व्यक्तित्वमें गुणोंकी अभिव्यक्ति होती है, परंतु उनका अभिमान भी नहीं रखना है।

प्रश्न उठता है कि जिसकी इतनी चर्चा की गयी है, वह बुराई (दोष या भूल कहें) वास्तवमें है क्या और जो जीवनसे जानी हुई बुराई निकालनेकी बात कही गयी है, वह कैसे सम्भव है। निम्नलिखित उद्धरणसे इस प्रश्नका सरल और स्पष्ट उत्तर मिल जाता है—

‘अब विचार करना है कि गुण क्या है और दोष क्या है? दूसरोंकी ओरसे अपने प्रति होनेवाले दोषका ज्ञान स्वतः हो जाता है और दूसरोंसे हम वही आशा करते हैं, जो गुण है। कोई भी अपना अनादर, हानि-क्षति नहीं चाहता। सभी आदर, प्यार और रक्षा चाहते हैं। जिन प्रवृत्तियोंसे किसीकी क्षति हो, किसीका अनादर हो, किसीका अहित हो, वे सभी दोष हैं और जिन प्रवृत्तियोंसे दूसरोंका हित, लाभ एवं प्रसन्नता हो वे सभी गुण हैं।’

‘गुणोंका उपयोग दूसरोंके प्रति होता है और उससे अपना विकास स्वतः हो जाता है। जिन प्रवृत्तियोंसे दूसरोंका अहित होता है, उन प्रवृत्तियोंसे अपना भी अकल्याण ही होता है। यह रहस्य जान लेनेपर दूसरोंके अहितकी कामना सदाके लिये मिट जाती है और सर्वहितकारी भावना स्वतः जाग्रत् होती है।’

‘सर्व-हितकारी भावनाकी भूमिमें ही गुण विकास पाते हैं। जो किसीका बुरा नहीं चाहता, उसके सभी दोष स्वतः मिट जाते हैं। एक ही दोष स्थानभेदसे भिन्न-भिन्न प्रकारका भासता है। सर्वांशमें किसी भी दोषके मिट जानेपर सभी दोष मिट जाते हैं और सर्वांशमें किसी

भी गुणके अपना लेनेपर सभी गुण स्वतः आ जाते हैं। इस दृष्टिसे दोषोंकी निवृत्ति और सदगुणोंकी अभिव्यक्ति युगपद् (automatic and simultaneous) है।’

‘सर्वांशमें गुणोंकी अभिव्यक्ति होनेपर निरभिमानता आ जाती है; क्योंकि दोषोंकी उत्पत्ति नहीं होती और गुणोंसे अभिन्नता हो जाती है। यह नियम है कि जिससे अभिन्नता (identity) हो जाती है, उसका भास नहीं होता, अर्थात् उसमें अहम्बुद्धि नहीं होती अपितु वह जीवन हो जाता है।’

उपर्युक्त कथनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि गुण तथा दोष क्या हैं और दोषोंकी निवृत्ति और गुणोंकी अभिव्यक्ति किस प्रकार सम्भव है। यहाँ यह ध्यान देनेकी बात है कि हमें अपनेको अपनी दृष्टिमें तौलना है न कि इस आधारपर कि हमें लोग कैसा समझते हैं। ‘हमें कोई बुरा न समझे, इससे हम भले हो नहीं जाते, भले तो बुराईके त्यागसे ही हो सकते हैं।’

ऐसा तर्क कोई प्रस्तुत कर सकता है कि हमें भले बननेकी क्या जरूरत है, हम जैसे हैं, वैसे ही ठीक हैं, परंतु ऐसा वही कह सकता है, जिसकी जीवन-बुद्धि विकारों और वासनाओंमें ही है और जीवनका कोई लक्ष्य ही नहीं है। जिसके जीवनमें लक्ष्य अथवा वास्तविक माँग परम शान्ति, परम स्वाधीनता और परम प्रियताकी है, वह ऐसा नहीं कहेगा; क्योंकि वह जानता है कि इनकी प्राप्ति निर्दोषताके बिना नहीं हो सकती।

अपनेको बुराईरहित बनाना अर्थात् हम किसीको बुरा न समझें, किसीका बुरा न चाहें और किसीके प्रति बुराई न करें, सहज हो जाता है, यदि यह ध्यान बना रहे कि भौतिकवादीकी दृष्टिसे जो जगत्की ही सत्ता मानते हैं, जगत्के नाते हम सब एक हैं, अध्यात्मवादीकी दृष्टिसे सभी परमात्माके अंश हैं और ईश्वरवादीकी दृष्टिसे सभी उसीके रूप हैं। इसलिये ‘कोई और नहीं कोई गैर नहीं।’

साधनोपयोगी पत्र

(१)

निःस्वार्थ प्रेम और सच्चरित्रताकी महिमा

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। पत्र तो मैं नहीं दे पाता, परंतु आपकी और आपके घरभरकी मधुर स्मृति कई बार होती है। संसारका मिलना बिछुड़नेके लिये ही हुआ करता है। जहाँ राग होता है, वहाँ विछोहमें दुःख और स्मृतिमें सुख-सा प्रतीत होता है। जहाँ द्वेष होता है, वहाँ विछोहमें सुख और स्मृतिमें दुःख होता है। राग-द्वेषसे परे निःस्वार्थ प्रेमकी एक स्थिति होती है, वहाँ माधुर्य-ही-माधुर्य है। स्वार्थ ही विष और त्याग ही अमृत है। जिस प्रेममें जितना स्वार्थत्याग होता है, उतना ही उसका स्वरूप उज्ज्वल होता है। प्रेमका वास्तविक स्वरूप तो त्यागपूर्ण है, उसमें तो केवल प्रेमास्पदका सुख-ही-सुख है। अपने सुखकी तो स्मृति ही नहीं है। अस्तु,

धन कमानेमें उन्नति हो यह तो व्यावहारिक दृष्टिसे वाञ्छनीय है ही, परंतु जीवनका उद्देश्य यही नहीं है। जीवनका असली उद्देश्य महान् चरित्रबलको प्राप्त करना है, जिससे भगवत्प्राप्तिका मार्ग सुगम होता है। धन, यश, पद, गौरव, मान, सन्तान सब कुछ हो, परंतु यदि मनुष्यमें सच्चरित्रता नहीं है तो वह वस्तुतः मनुष्यत्वहीन है। सच्चरित्रता ही मनुष्यत्व है।

धन कमानेकी इच्छा ऐसी प्रबल और मोहमयी न होनी चाहिये, जिससे न्याय और सत्यका पथ छोड़ना पड़े, दूसरोंका न्याय्य स्वत्व छीना जाय और गरीबोंकी रोटीपर हाथ जाय। जहाँ विलासिता अधिक होती है, खर्च बेशुमार होता है, भोगासक्ति बढ़ी होती है, झूठी प्रेस्टिज (Prestige)-का भार चढ़ा रहता है, वहाँ धनकी आवश्यकता बहुत बढ़ जाती है और वैसी हालतमें न्यायान्यायका विचार नहीं रहता। गीतामें आसुरी सम्पत्तिके वर्णनमें भगवान् ने कहा है—‘कामोपभोगपरायण पुरुष अन्यायसे अर्थोपार्जन करता है।’ बुद्धिमान् पुरुषको इतनी बातोंपर ध्यान रखना चाहिये—विलासिता न बढ़े, फिजूलखर्ची न हो, जीवन यथासाध्य सादा हो, इज्जतका ढकोसला न रखा जाय, भोगियोंकी नकल न की जाय और परधनको

विषके समान समझा जाय। इन बातोंको ध्यानमें रखकर सत्यकी रक्षा करते हुए ही धनोपार्जनकी चेष्टा करनी चाहिये और यदि धन प्राप्त हो तो उसे भगवान् की चीज मानकर अपने निर्वाहमात्रका उसमें अधिकार समझकर शेष धनसे भगवान् की सेवा करनी चाहिये। कुटुम्बसेवा, गरीब-दुखी और विधवाओंकी सेवा आदिके रूपमें यह भगवत्सेवा की जा सकती है। सेवा करके अभिमान नहीं करना चाहिये। भगवान् की वस्तुसे भगवत्सेवा हो; हमें तो केवल निमित्तमात्र हैं, उन्हींकी चीज है, उन्हींके काममें लगती है, उन्हींके आज्ञानुसार लगती है। इसमें हमारे लिये अहंकारकी कौन-सी बात है? प्रभुके काममें न लगाकर स्वयं भोगते तो बेईमानी थी, पाप था। इन सब बातोंका खयाल रखना चाहिये। हो सके तो नित्य कुछ सद्ग्रन्थोंका स्वाध्याय और भगवद्भजन भी अवश्य करना चाहिये। इसकी आवश्यकता पीछे अवश्य मालूम होगी और उस समय पहलेका अभ्यास न होनेसे बड़ी कठिनाई होगी। शेष प्रभुकृपा।

(२)

श्रीजगन्नाथजीके प्रसादकी महिमा

आपका कृपापत्र मिला। श्रीजगन्नाथपुरी (पुरुषोत्तमक्षेत्र) काशीकी भाँति ही बहुत ही प्राचीन तीर्थ है। पुराणोंमें इसका बड़े विस्तारसे वर्णन है। स्कन्दपुराणके विष्णुखण्डमें पुरुषोत्तम-माहात्म्यके ५१ अध्याय हैं। परिवर्तन तो सभी क्षेत्रोंमें हुए हैं। यहाँ भी हुए हैं। आपने श्रीजगन्नाथजीके प्रसादके सम्बन्धमें पूछा सो इस सम्बन्धमें यह निवेदन है कि भगवान् के प्रसादमें साधारण अन्न-बुद्धि करना पाप माना गया है। प्रसाद प्रसाद ही है और बिना किसी संकोचके सबको उसका ग्रहण करना चाहिये। फिर, श्रीजगन्नाथजीके प्रसादके सम्बन्धमें तो यहाँतक वचन मिलते हैं कि—

पाकसंस्कारकर्तृणां सम्पर्कोऽत्र न दुष्यति।

पद्मायाः सन्निधानेन सर्वे ते शुचयः स्मृताः॥

वेश्यालयगतं तद्धि निर्माल्यं पतितादयः।

स्पृशन्त्यन्नं न दुष्टं तद्यथा विष्णुस्तथैव तत्॥

[illegible]

निन्दन्ति ये तदमृतं मूढाः पण्डितमानिनः ।
स्वयं दण्डधरस्तेषु सहते नापराधिनः ॥
येषामत्र न दण्डश्चेद्ध्रुवा तेषां हि दुर्गतिः ।
कुम्भीपाके महाघोरे पच्यन्ते तेऽतिदारुणे ॥
कुक्कुरस्य मुखाद्भ्रष्टं तदन्नं पतते यदि ।
ब्राह्मणेनापि भोक्तव्यं सर्वपापापनोदनम् ॥

(स्कन्दपुराण, वैष्णवखण्ड)

‘रसोई बनानेवालोंके सम्पर्कमें कोई दोष नहीं होता; क्योंकि श्रीलक्ष्मीजीकी सन्निधिके कारण वे सभी पवित्र हो जाते हैं। महाप्रसाद यदि वेश्यालयमें हो अथवा पतितादिके द्वारा स्पर्श किया हुआ हो, तब भी दूषित नहीं होता। वह विष्णुकी तरह पवित्र ही रहता है। जो पण्डिताभिमानी मूढ़ लोग अमृतरूप प्रसादकी निन्दा करते हैं, भगवान् उनके अपराधको न सहकर स्वयं उन्हें दण्ड देते हैं। यहाँ कदाचित् उनको दण्ड भोगते हुए न भी देखा जाय परंतु यह तो निश्चय ही है कि उनकी दुर्गति अवश्य होती है। मरनेके बाद वे महाघोर भयानक कुम्भीपाक नरकमें यातना भोगते हैं। सारे पापोंका नाश करनेवाला प्रसाद यदि कुत्तेके मुखसे गिरा हुआ हो, उसको भी ब्राह्मणतक खा सकते हैं।’

इसी प्रकार पद्मपुराणमें आया है—

चाण्डालेनापि संस्पृष्टं ग्राह्यं तत्रान्नमग्रजैः ।

× × × ×

पवित्रं भुवि सर्वत्र यथा गङ्गाजलं द्विज ।

तथा पवित्रं सर्वत्र तदन्नं पापनाशनम् ॥

‘पुरुषोत्तमक्षेत्रमें चाण्डालके द्वारा स्पर्श किया हुआ प्रसाद भी द्विजोंको ग्रहण करना चाहिये। हे द्विज! जैसे पृथ्वीमें गंगाजल सर्वत्र ही पवित्र है, वैसे ही यह प्रसाद भी सर्वत्र पवित्र और पाप-नाश करनेवाला है।’

प्रसिद्ध भक्त श्रीरघुनाथ गोस्वामी तो पुरुषोत्तमक्षेत्रमें नालेमें बहकर आता हुआ प्रसाद बटोरकर उसे खाया करते थे। वह प्रसाद इतना पवित्र माना जाता था कि स्वयं श्रीचैतन्य महाप्रभुने एक दिन उनके हाथसे छीनकर उसको खा लिया था।

लिये साधारण अन्न नहीं है, वह तो परम दुर्लभ, सर्वपापनाशक महाप्रसाद है। प्रसादका स्वाद, उसकी बाहरी पवित्रता, उसका मीठा या कडुवापन नहीं देखा जाता। उसमें देखनेकी बात केवल एक ही है कि वह भगवान्‌का प्रसाद है। जिसको हमारे प्रभुने मुँहमें रख लिया, वही हमारे लिये परम पवित्र, परम मधुर और परम अमृत है। अतएव भक्तोंको बिना किसी विचारके भक्ति-श्रद्धापूर्वक तथा सत्कारके साथ प्रसादको ग्रहण करना चाहिये।

इसका यह अर्थ नहीं कि साधारण खान-पानमें पवित्रताका ख्याल छोड़ दिया जाय। वहाँ तो शास्त्रोक्त सभी प्रकारकी पवित्रताका खयाल पहले करना चाहिये। भगवत्प्रसाद साधारण अन्नकी श्रेणीसे परे है। शेष प्रभक्ता

(३)

गम्भीरता या प्रसन्नता

पत्र मिला, धन्यवाद ! निवेदन यह है कि एक ऐसी भी आध्यात्मिक स्थिति होती है और वह अच्छी होती है, जिसमें अन्तरमें उदासी न होनेपर भी चेहरेपर उदासी-सी मालूम होती है। यह वैराग्यकी एक अवस्था है, परंतु चेहरेकी उदासी और गम्भीरता ही आध्यात्मिक उन्नति या स्थितिकी पहचान नहीं है। गम्भीरता होनी चाहिये भीतर, इतनी कि जो किसी भी प्रकारसे किसी भी बाह्य परिस्थितिमें चित्तको क्षुब्ध न होने दे। बाहर तो सदा प्रसन्नता और हँसी ही होनी चाहिये। समुद्रका अन्तस्तल कितना गम्भीर होता है, उसमें कभी बाढ़ आती ही नहीं, परंतु उसके वक्षःस्थलपर असंख्य तरंगें नित्य-निरन्तर नाचती रहती हैं—अठखेलियाँ करती रहती हैं। इसी प्रकार हृदय विशुद्ध, विकाररहित, स्थिर, गम्भीर और भगवत्संयोगयुक्त होना चाहिये और बाहर उनकी विविध लीलाओंको देख-देखकर पल-पलमें परमानन्दमयी हँसीकी लहरें लहराती रहनी चाहिये। मुर्दे-सा मुर्झाया हुआ मुँह किस कामका ? जिसे देखते ही देखनेवालोंका भी हृदय हँस उठे, मुखकमल खिल उठे, मुखमद्रा तो ऐसी ही होनी चाहिये।

इसका यह अर्थ भी नहीं कि विनोदके नामपर मर्यादारहित अनर्गल, असत्य प्रलाप किया जाय। उसका

व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७३, शक १९३८, सन् २०१६, सूर्य दक्षिणायन, शरद्-ऋतु, कार्तिक कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा प्रातः ७।५९ बजेतक	सोम	अश्विनी दिनमें ११।१ बजेतक	१७ अक्टूबर	मूल दिनमें ११।१ बजेतक, तुला संक्रान्ति रात्रिमें ८।२६ बजे।
द्वितीया रात्रिशेष ५।३४ बजेतक				
तृतीया रात्रिमें ३।९ बजेतक	मंगल	भरणी " ९।२१ बजेतक	१८ "	भद्रा सायं ४।२२ बजेसे रात्रिमें ३।९ बजेतक, वृषराशि दिनमें २।५६ बजेसे।
चतुर्थी " १२।४८ बजेतक	बुध	कृत्तिका प्रातः ७।४१ बजेतक	१९ "	संकष्टी (करवा) श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ८।२८ बजे।
पंचमी " १०।३७ बजेतक	गुरु	मृगशिरा रात्रिशेष ४।४१ बजेतक	२० "	मिथुनराशि सायं ५।२४ बजेसे।
षष्ठी " ८।३८ बजेतक	शुक्र	आर्द्रा रात्रिमें ३।३० बजेतक	२१ "	भद्रा रात्रिमें ८।३८ बजेसे।
सप्तमी " ७।० बजेतक	शनि	पुनर्वसु " २।४० बजेतक	२२ "	भद्रा दिनमें ७।५० बजेतक, कर्कराशि रात्रिमें ८।५३ बजेसे, अहोईव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ११।२१ बजे।
अष्टमी सायं ५।४२ बजेतक	रवि	पुष्य " २।१० बजेतक	२३ "	मूल रात्रिमें २।१० बजेसे, श्रीराधाष्टमी, सायन वृश्चिकराशिका सूर्य रात्रिमें ७।५ बजे।
नवमी " ४।४९ बजेतक	सोम	आश्लेषा " २।७ बजेतक	२४ "	भद्रा रात्रिमें ४।३७ बजेसे, सिंहराशि रात्रिमें २।७ बजेसे, स्वाती नक्षत्र का सूर्य दिनमें १२।५६ बजे।
दशमी " ४।२५ बजेतक	मंगल	मघा " २।३१ बजेतक	२५ "	भद्रा सायं ४।२५ बजेतक, मूल रात्रिमें २।३१ बजेतक।
एकादशी " ४।३२ बजेतक	बुध	पू० फा० " ३।२८ बजेतक	२६ "	रम्भाएकादशीव्रत (सबका), गोवत्सद्वादशीव्रत।
द्वादशी " ५।१२ बजेतक	गुरु	उ०फा० रात्रिशेष ४।५५ बजेतक	२७ "	कन्याराशि दिनमें ९।५१ बजेसे, प्रदोषव्रत।
त्रयोदशी रात्रिमें ६।१७ बजेतक	शुक्र	हस्त अहोरात्र	२८ "	भद्रा रात्रिमें ६।१७ बजेसे, धनतेरस, धन्वन्तरि-जयन्ती, नरकचतुर्दशी।
चतुर्दशी " ७।५२ बजेतक	शनि	हस्त प्रातः ६।४९ बजेतक	२९ "	भद्रा दिनमें ७।५ बजेतक, तुलाराशि रात्रिमें ७।५६ बजेसे, श्रीहनुमज्जयन्ती।
अमावस्या " ९।४५ बजेतक	रवि	चित्रा दिनमें ९।४ बजेतक	३० "	अमावस्या, दीपावली।

सं० २०७३, शक १९३८, सन् २०१६, सूर्य दक्षिणायन, शरद्-ऋतु, कार्तिक शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा रात्रिमें ११।५० बजेतक	सोम	स्वाती दिनमें ११।३३ बजेतक	३१ अक्टूबर	काशीसे अन्यत्र गोवर्धनपूजा।
द्वितीया " १।५८ बजेतक	मंगल	विशाखा " २।१२ बजेतक	१ नवम्बर	वृश्चिकराशि दिनमें ७।३२ बजेसे, यमद्वितीया, भइयादूज।
तृतीया " ३।५७ बजेतक	बुध	अनुराधा सायं ४।४५ बजेतक	२ "	मूल सायं ४।४५ बजेसे।
चतुर्थी रात्रिशेष ५।३८ बजेतक	गुरु	ज्येष्ठा रात्रिमें ७।४ बजेतक	३ "	भद्रा सायं ४।४८ बजेसे रात्रिशेष ५।३८ बजेतक, धनुराशि रात्रिमें ७।४ बजेसे, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत।
पंचमी अहोरात्र	शुक्र	मूल " ९।४ बजेतक	४ "	मूल रात्रिमें ९।४ बजेतक।
पंचमी प्रातः ६।५५ बजेतक	शनि	पू० षा० " १०।३६ बजेतक	५ "	मकरराशि रात्रिमें ४।४२ बजेसे।
षष्ठी " ७।४७ बजेतक	रवि	उ० षा० " ११।४१ बजेतक	६ "	श्रीसूर्यषष्ठीव्रत, विशाखानक्षत्रका सूर्य रात्रिमें ८।४ बजे।
सप्तमी दिनमें ८।६ बजेतक	सोम	श्रवण " १२।१५ बजेतक	७ "	भद्रा दिनमें ८।६ बजेसे रात्रिमें ७।५९ बजेतक।
अष्टमी " ७।५२ बजेतक	मंगल	धनिष्ठा " १२।१९ बजेतक	८ "	कुंभराशि दिनमें १२।१७ बजेसे, गोपाष्टमी, अक्षयनवमी, पंचकारम्भ दिनमें १२।१७ बजे।
नवमी प्रातः ७।११ बजेतक	बुध	शतभिषा " ११।५५ बजेतक	९ "	दुर्लभ सन्धिकरयोग प्रातः ७।११ से रात्रिमें ११।१५ बजेतक।
दशमी रात्रिशेष ६।२ बजेतक				
एकादशी रात्रिमें ४।३१ बजेतक	गुरु	पू० भा० " ११।११ बजेतक	१० "	भद्रा सायं ५।१७ बजेसे रात्रिमें ४।३१ बजेतक, मीनराशि सायं ५।२२ बजेसे, प्रबोधिनी एकादशीव्रत (स्मार्त)।
द्वादशी " २।३९ बजेतक	शुक्र	उ० भा० " १०।४ बजेतक	११ "	एकादशीव्रत (वैष्णव), तुलसीविवाह, मूल रात्रिमें १०।४ बजेसे।
त्रयोदशी " १२।३३ बजेतक	शनि	रेवती " ८।४२ बजेतक	१२ "	मेषराशि रात्रिमें ८।४२ बजेसे, शनिप्रदोषव्रत, पंचक समाप्त रात्रिमें ८।४२ बजे।
चतुर्दशी " १०।१७ बजेतक	रवि	अश्विनी " ७।९ बजेतक	१३ "	भद्रा रात्रिमें १०।१७ बजेसे, श्रीवैकुण्ठचतुर्दशीव्रत, मूल रात्रिमें ७।९ बजेतक।
पूर्णिमा " ७।५५ बजेतक	सोम	भरणी सायं ५।३० बजेतक	१४ "	भद्रा दिनमें ९।६ बजेतक, वृषराशि रात्रिमें ११।५ बजेसे, कार्तिकी पूर्णिमा।

श्रीभगवन्नाम-जपकी शुभ सूचना

(इस जपकी अवधि कार्तिक पूर्णिमा, विक्रम-संवत् २०७२ से चैत्र पूर्णिमा, विक्रम-संवत् २०७३ तक रही है)

ते सभाग्या मनुष्येषु कृतार्था नृप निश्चितम् ।

स्मरन्ति ये स्मारयन्ति हरेर्नाम कलौ युगे ॥

‘राजन्! मनुष्योंमें वे लोग भाग्यवान् हैं तथा निश्चय ही कृतार्थ हो चुके हैं, जो इस कलियुगमें स्वयं श्रीहरिका नाम-स्मरण करते और दूसरोंसे नाम-स्मरण करवाते हैं ।’

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥

—इस वर्ष भी इस षोडश नाम-महामन्त्रका जप पर्याप्त संख्यामें हुआ है । विवरण इस प्रकार है—

(क) मन्त्र-संख्या ७५,४२,२१,५०० (पचहत्तर करोड़, बयालीस लाख, इक्कीस हजार, पाँच सौ) ।

(ख) नाम-संख्या १२,०६,७५,४४,००० (बारह अरब, छः करोड़, पचहत्तर लाख, चौवालीस हजार) ।

(ग) षोडश नाम-महामन्त्रके अतिरिक्त अन्य मन्त्रोंका भी जप हुआ है ।

(घ) बालक, युवक-वृद्ध, स्त्री-पुरुष, गरीब-अमीर, अपढ़ एवं विद्वान्—सभी तरहके लोगोंने उत्साहसे जपमें योग दिया है । भारतका शायद ही कोई ऐसा प्रदेश बचा हो, जहाँ जप न हुआ हो । भारतके अतिरिक्त बाहर फ्रामिंधम, मिडिलटाउन, यू०के०, यू०एस०ए०, यूनाइटेड किंगडम, नेपाल आदिसे भी जप होनेकी सूचनाएँ प्राप्त हुई हैं ।

स्थानोंके नाम—

अंकलेश्वर, अंगनापारा, अंधराठाढी, अंबरनाथ, अंबाजोगाई, अंबाला कैट, अंबाला शहर, अकबरपुर, अकोड़ा, अकोला, अगराना, अचरोल, अचानामुरली, अजमेर, अटरिया, अठहठा, अडसीसर, अनगाँव, अमरा, अमरावती, अमलोह, अमृतपुर, अमृतसर, अम्बाह, अरडका, अलकनन्दा, अलवर, अलीगढ़, अलीपुरकला, अल्मोड़ा, अवरीकला, असुरेश्वर, अहमदाबाद, आइसन, आई.टी. रोड, आऊवा, आगरा, आडंद, आनन्दनगर, आबूरोड, आमगाँवबड़ा, आमगाढ़, आरंभा, आर्वी, आष्टा, आला (नेपाल), आलेफाटा, आलोट, आसंग, इंगतपुरी, इंदरवास,

इंदौर, इचलकरंजी, इटावा, इटौन्हा, इसौली, इलाहाबाद, इरांग पार्त I-II, इरेल भेली I-II, ईसरदा, उखुल, उज्जैन उतासैली, उदखेड़, उदगीर, उदयपुर, उधमसिंहनगर, उन्नाव, उरतुम, उलहासनगर, उस्मानाबाद, ऊदपुर, ऊना, ऊमरी, ऊसररी, ऋषिकेश, एटा, ऐनखेड़ा, ओड़ारसकरी, ओबरा, औरंगाबाद, कंचनपुर, कधारा, कछुआ, कछुआरा, कटक, कटनी, कटरा, कटिहार, कड़ीला, कदन्ना, कनखल, कन्नौज, कपासन, कफलोड़ी, करनसर, करनाल, करबगाँव, करही (शुक्ल), करीमुद्दीनपुर, करौदी, कलकत्ता, कल्याणपुर, कवलपुरा मठिया, कसारीडीह, काँगाड़ा, काँगापेक्की, काँगलातोम्बी, काचीगुड़ा, कानड़ी, कानपुर, कानूनगोयान, कान्दीवली, कापरेन, कालका, कालपी, कालाडेरा, कालापहाड़, कालीकट, कालूखाँड़, कालूहेड़ा, काशीपुर, किरारी, किदवईनगर, किशनगंज, कीसयारपुर, कुँआरिया, कुंडा, कुकड़ेश्वर, कुक्कुटपल्ली, कुक्षी, कुचामन सिटी, कुरमापाली, कुरावली, कुरुक्षेत्र, कुशहर, कुसैला, कूड़ाघाट, कृष्णनगर, केकड़ी, केंकरा, केदारपुरा, केन्दुआ, केशरपुरा, केसिंगा, कैथल, कोंच, कोईरागै, कोईलारी, कोकलकचक, कोटई, कोटद्वार, कोटा, कोठार, कोठी, कोड़लहिया, कोथराखुर्द, कोब्रुलैखा, कोरबा, कोलकाता, कोलारस, कोलिया, कोसीकला, कोसीर, कोहका, कोहलमिश्र, कौडिया, कौहाकुड़ा, कौलती (नेपाल), कौवाताल, खंडवा, खंडेला, खगड़िया, खजुरीरुण्डा, खजुहा, खंजूरी, खडगाँवकला, खड़ीत, खरखो, खरगढ़, खरगापुर, खरगोन, खराड़ी, खरेडा, खवासा, खाकोली, खानकित्ता, खालवागाँव, खालिकगढ़, खिरकिया, खिरलिया, खुँटपला, खुरपावड़ा, खुरई, खेड़ा रसूलपुर, खेलदेश पाण्डेय, खैराचातर, खैराबाद, खैल, खोकराकला, गंगापुर सिटी, गंगाशहर, गंगेव, गंगोह, गंज, गड़कोट, गढ़पुरा, गढ़बसई, गणेंती, गनोड़ा, गम्हरिया, गया, गरियाखेड़ी, गहमर, गाँधीनगर, गागर, गाजियाबाद, गाजीपुर, गाडरवारा, गाड़ीपुरा, गुंडरदेही, गुड़गाँव, गुड़ाकला, गुड़ाबीजा, गुरदासपुर, गुलबर्गा, गोंडा, गोकुलेश्वर, गोडडा, गोपिबुंग, गोपेश्वर, गोरखपुर, गोरेगाँव,

नंदपुर, नअगा, नन्दावता, नदौरा, नन्हावारा कला, नमककटरा,
नबाबगंज, नयी दिल्ली, नरवाना, नरसिंहपुर, नरायनपुर,
नरेलाशंकरी, नलवार, नवादा, नहरकाटा, नांगलोई, नांदन,
नाकोट, नागपुर, नागोद, नागौर, नाचनी, नाढ़ी, नाथूखेड़ी,
नानगाँव, नानामाण्डवा, नारायणगढ़, नारायणपुरा, नावांशहर,
नासिक, निफाड़, निमाज, नीमच, नीमताल, नेवरा, नेवासा,
नैनकरा, नैनवा, नैनीताल, नोएडा, नोनीहाट, नोनैती, नौगाँव,
न्यूमाधोपुर, न्यूशिमला, पंडतेहड़, पंडेर, पकड़ी, पचपेड़ा,
पचावली, पटना, पटना सिटी, पड़ग, पतालघुटकुरी,
पतारी, पत्थरकोट (नेपाल), पत्योरा, पदमपुर, पथरगुआँ,
पथरिया, पनवाड़ी, पद्मनाभनगर, परभड़ी, परलीबैजनाथ,
परसापाली, पलेई, पलेरा, पवाई, पंहगेर, पहरा, पहारपुर,
पाटमऊ, पाटलीपुत्र, पडरिडांडा, पानीपत, पाली, पाली
मारवाड़, पाहल, पिंडरई, पिजड़ा, पिछोर, पिथापुर, पिपरिया,
पिपलगाँवबसंत, पिपरियागंगा, पिपरौआकला, पिरौना, पिलखुआ,
पीठीपट्टी, पीपलरावा, पीलीभीत, पुखऊ, पुणे, पुनासा,
पुपरी, पुरसन्डा, पुरेना, पुर्निया, पूरेगंगाराम, पेटलावद,
पोखरभिण्डा, पोटली, पौआखाली, पौना, प्रतापपुर तरहर,
प्रीतमपुरी, फतेहगढ़, फरीदाबाद, फर्रुखाबाद, फसिया, फागा,
फागी, फिरोजपुर, फिल्लौर, फूलपुरामा, फूलबेहड़, फैजाबाद,
बंगलौर, बंसीपुर, बन्तवाला, बक्खापुरवा, बगदड़िया, बघेरा,
बछरावा, बजकोट, बटेसरा, बड़कागाँव, बड़खेरावा, बड़वानी,
बड़ालू, बड़ोरावला, बड़ीमुरवानी, बड़ौदा, बढलठोर, बदडीहा,
बदायूँ, बनवसा, बनवारीबसंत, बनेड़िया, बनोरा, बनैल,
बन्नी, बभनान, बमोरा, बमनियाकला, बयडीहा, बयाना,
बरखेडासोमा, बरवाडीह, बरगदही वसंतनाथ, बरडा, बरडेज,
बरमकेला, बरेला, बरेली, बरूड़, बरेलीकलाँ, बरोरी,
बरोहा, बर्डोद, बलवाड़ा, बलदेवा, बलिया, बलौदा,
बसन्तपुरखुर्द, बसदेहड़ा, बस्ती, बहादुरपुर, बहेरी, बस्तर,
बाँसवाडा, बाँसाकला, बागपत, बागबहरा, बाघमारा, बाछौर,
बामौरीताल, बाडमेर, बाप, बाबई, बामनखेड़ा, बायतु,
बार, बारा, बालासोर, बाराबंकी, बालूमाजरा, बावड़ियाकला,
बास, बिटोरा, बिदरेली, बिरहाकन्हई, बिलरा, बिलवाई,
बीकानेर बीडका खेडा बीनागंज बीरमपुरा बीसापरकला

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

सुडतरा, बुलन्दशहर, बुल्ढाणा, बेगूँ, बेनियाकाबास, बेरलीखुर्द, बेहड़ी, बेरहामपुर, बेरावल, बेरासो, बेरी, बेलड़ा, बेलसोन्डा, बेलोना, बैकुंठपुर, बैरसिया, बैला, बोकारो, बोधन, बोराड़ा, ब्रह्मावल्ली, भईन्दर, भटगाँव, भटवलिया, भटिण्डा, भदानीनगर, भदरू धनेटा, भन्सुली, भन्दर, भयन्दर, भरतपुर, भरथना, भरवाई, भरसी, भरूच, भलकी, भलदेन, भलस्वा ईसापुर, भवराणा, भाटनटोला, भाड़तू, भाणुजा, भादरा, भिण्ड, भिण्डुवा, भिनगा, भीकनगाँव, भिनाय, भिलाई, भिवण्डी, भिवानी, भीखनपुर, भीमदासपुर, भीनासर, भुज, भुसावर, भुसावल, भैसलाना, भैसछोड़, भैरमपुर, भोकरदन, भोगपुर, भोड़वालमाजरी, भोपाल, मंगराजपुर, मंडी, मंडीगोविन्दगढ़, मंत्रिपुखी, मक्यांग, मऊ, मकवा, मजिरकांडा (नेपाल), मझगुवाँखुर्द, मझरिया, मझलैटा, मडू, मथुरा, मदाना, मधुबनी, मनकापुर, मनोरी, मलँगवा (ने०), महाराजगंज, महारौनी, महल, महाजनान, महादेवा, महासमुन्द, महिषी, महुआ, महुआशाला, महुडर, महेसानी (ने०), महेन्द्र, महेशानी, मांडल, माचलपुर, माजिरकाडा, माडलगढ़, मानेडाड़ा, मारगोमुण्डा, मिर्जापुर, मिश्रपुर, मिश्रादौर, मीलवां, मुँगेर, मुँगेली, मुखेड़, मुम्बई, मुजफ्फरनगर, मुजफ्फरपुर, मुठीपार, मुबारकपुर, मुरडाकिया, मुरमूनी, मुरादाबाद, मुरई, मुलड, मुलताई, मुल्लनपुर, मुलुण्ड, मुस्तफाबाद, मूडी, मेड़तारोड, मेड़तासिट्टी, मेरठ, मेवड़ा, मैगलगंज, मैहर, मोटबुंग, मोतियाडुमरिया, मोरपा, मोरकोन, मोलकोन, मोहाली, मौजपुर, यमुनानगर, यवतमाल, रंगिया, रगजा, रघुनाथपुर, रजीपुरा, रठेरा, रणग्राम, रतनपुर, रतनमहका, रतलाम, रतनागरपुर, रनचिराई, रनवारी, रन्नौद, रन्नी, रसूलपुर, रसूलिया, रहली, राँची, राजनगर, राजनाद गाँव, राजपुर, राजरूपपुर, राजाआहर, राजापारा, राजेपुर, रादौर, रानापुर, रानीकटरा, रामनगर, रामपुर, रामपुरनैकिन, रामपुरवा, रामेश्वर कम्पा, रायगढ़, रायपुर, रायपुरशिवाला, रायबरेली, रायरंगपुर, रायला, रावतपुर, रावतभाटा, रावली, रावतसर, रींगस, रुड़की, रुदौली, रुस्तमनगर, रुहट्टा, रेवड़ापुर, रेहलू, रैहन, रोपर, रोपा, रोहतक, रोहनिया, लक्ष्मणगढ़, लायनपुर, लायनदौन, लखवीबाग, लायन, लखनापुर

For more books and documents visit our discord server at: <https://discord.gg/LX9mZ8>

लखीमपुर खीरी, लमतड़ा, लरछुट, ललितपुर, लश्कर,
लाखागुडा, लाडपुरा, लासूरसेहान, लाहरखेरा, लिखमीपुर,
लिलवानी, लिलुआ, लुंगफौ, लुणसू, लुधियाना, लेडुआखाड़,
लोहरदगा, लोहासिंहा, लोहारा, लैमाखोंग, वंडा, वक्खापुरवा,
वटवारा, वदनरेंगगाई, वर्धमान, वर्धा, वल्लभनगर, वसई,
वाड़ा, वाड़ी, वाड़ता, वापी, वाराणसी, वाहेगाँव दिमनी
विच्छलखा, विजावर, विदिशा, विराटनगर (ने०), विलसंडा,
विशाखापट्टनम, विशाड़, विशुनपुरवा, वैर, वैशाली नगर,
वौना, व्यावर, शक्तिनगर, शमसाबाद, शान्तिपुर, शाजापुर,
शाहकोट, शाहजहाँपुर, शाहतलाई, शाहपुर, शाहपुर (मगरौन),
शाहपुरा, शाहपुरागोगावां, शिकारपुर, शिकोहाबाद, शिवाड़,
शेखपुर, शेखावटी, शेरगढ़, शेरुडा, श्यामगढ़, श्योपुर,
श्यामलाहिल्स, श्रीगंगानगर, संगढेसिया, संदणा, संगनेश्वरनगर,
संगावली, संधर, संबलपुर, सकरी, सतना, सन्तोलाबारी,
सपिया, सफीपुर, सरथुआ, सलखुआ, सलेमपुर, सल्लिया,
सरहुला, सरैधी, सरैया प्रवेशपुर, सल्लिया, ससना, सहारनपुर,
सांगटी, साँगोद, सांगानेर, साढूमल, सानड, सागर, सादाबाद,
सानण पण्डितान, सामला, सारेयाद, सालोन बी, सावदा,
साहू, साहूकारा, सिंगापुर, सिंगोली, सिंगहा यूसुफपुर, सिंघानी,
सितारगंज, सिधौली, सिमलैगर बाजार, सिमरी, सिरपुर
कागजनगर, सिरसा, सिरहौल, सिरोही, सिलीगुड़ी, सिवनी,
सीहोर, सीकर, सीतामढ़ी, सीथल, सीनखेड़ा, सीपरीबाजार,
सीमातल्ला, सुखलिया, सुगवा, सुधारबाजार, सुरनगर,
सुरही, सुल्तानपुर, सुहागपुर, सूरत, सेतीखोला, सेनापति,
सेमराघुनवारा, सेमरामेडोल, सेमराहाट, सेमरीदेव, सेमारी,
सेम्फेंजुंग, सेंठा, सेरा (ने०), सेरो, सेलु, सेहरी, सैमल
चौड़, सोनपुरी, सोनभद्र, सोनरा, सोनवर्षाराज, सोनाहातु,
सोनीपत, सोपेंजा नेपाली, सोरखी, सोरवना, सोलन, सोलापुर,
हंसनगर, हटनी, हट्वा, हय, हतीसा, हथौड़ाखेड़ा, हमीरपुर, हरदा,
हरदोई, हरसौली, हरिद्वार, हरिहरपुर, हल्दिया, हल्द्वानी,
हल्दौर, हसनपालीया, हसनपुर, हसलपुर, हसुआ, हाजीपुर,
हातोतोता, हातोद, हाथरस, हाबड़ा, हारमा, हिंडौनसिटी,
हिसार, हिगोलाकला, हिम्मतगंज, हुगली, हुबली, हुमायूंपुर,
हैदराबाद, हैदराबाद होजवा, होजवा, होशियारपुर, हैअमौअह

श्रीभगवन्नाम-जपके लिये विनीत प्रार्थना

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

आज सारे संसारमें जीवनकी जटिलताएँ बढ़ती जा रही हैं। अधिकतर लोग अपनी असीमित भौतिक आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेमें संलग्न हैं। वे अपने क्षुद्र स्वार्थकी सिद्धिके लिये दूसरोंका अहित करनेमें भी कोई संकोच नहीं करते। परस्पर ईर्ष्या, द्वेष, वैमनस्य, कलह और हिंसाके वातावरणमें अशान्त स्थिति है। देशके कुछ भागोंमें तो हिंसाका नग्न ताण्डव दिखायी दे रहा है। अधिकतर लोग मानसिक तनावके शिकार बनते जा रहे हैं। कलिका प्रकोप सर्वत्र व्याप्त है। प्रश्न यह होता है कि इस स्थितिका समाधान क्या है? ऋषि-महर्षि, मुनि और शास्त्रोंने इस स्थितिको अपनी अन्तर्दृष्टिसे देखकर बहुत पहलेसे यह घोषित कर दिया है कि 'कलिकालमें मानव-कल्याण और विश्वशान्तिके लिये श्रीहरि-नामके अतिरिक्त कोई दूसरा सुलभ साधन नहीं है।' इसीलिये यह बात जोर देकर शास्त्रोंमें कही गयी है कि 'भगवान् श्रीहरिका नाम ही एकमात्र जीवन है। कलियुगमें इसके अतिरिक्त कोई दूसरा सहारा—चारा नहीं है'—

हरेनामैव नामैव नामैव मम जीवनम्।

कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥

(ना०पूर्व० ४१।११५)

हमारे शास्त्रोंके अतिरिक्त अनुभवी संत-महात्माओंने भी भगवन्नाम-स्मरण-जपको कलियुगका मुख्य धर्म (ऐहिक-पारलौकिक कल्याणकारी कर्तव्य) माना है। इतना ही नहीं, जगत्के समस्त धर्म-सम्प्रदाय भी किसी-न-किसी रूपमें भगवान्के नाम-स्मरण-जपके महत्त्वको प्रतिपादित करते हैं। नामके जप-स्मरणमें देश-काल-पात्रका कोई भी नियम नहीं है। श्रीचैतन्यमहाप्रभुने भी कहा है—

नाम्नामकारि बहुधा निजसर्वशक्ति-

स्तत्रार्पिता नियमितः स्मरणे न कालः।

'हे भगवन्! आपने लोगोंकी विभिन्न रुचि देखकर नित्य-सिद्ध अपने बहुत-से नाम कृपा करके प्रकट कर दिये। प्रत्येक नाममें अपनी सारी शक्ति भर दी और नाम-स्मरणमें देश-काल-पात्रका कोई नियम भी नहीं रखा।' विपत्तिसे त्राण पानेके लिये आज श्रीभगवन्नामका स्मरण ही एकमात्र उपाय है। ऐसा कौन-सा विघ्न है, जो

भगवन्नाम-स्मरणसे नहीं टल सकता और ऐसी कौन-सी वस्तु है, जो नहीं मिल सकती? इस कलिकालमें मंगलमय भगवान्के आश्रयके लिये भगवन्नामका सहारा ही एकमात्र अवलम्बन है। अतएव भारतवर्ष एवं समस्त विश्वके कल्याणके लिये, लौकिक अभ्युदय और पारलौकिक सुख-शान्तिके लिये तथा साधकोंके परम लक्ष्य एवं मानव-जीवनके परम ध्येय—भगवान्की प्राप्तिके लिये सबको भगवन्नामका स्मरण-जप-कीर्तन करना चाहिये।

अतः 'कल्याण' के भाग्यवान् ग्राहक-अनुग्राहक, पाठक-पाठिकाएँ स्वयं तथा अपने इष्ट-मित्रोंसे प्रतिवर्ष भगवन्नाम-जप करते-कराते आये हैं।

गत वर्ष पंचानबे करोड़ नाम-जपकी प्रार्थना की गयी थी। इस वर्ष विभिन्न स्थानोंसे जो सूचनाएँ प्राप्त हुई हैं; उनके अनुसार पचहत्तर करोड़, बयालीस लाख, इक्कीस हजार, पाँच सौ मन्त्रके नाम-जप हुए हैं। पिछले वर्षकी अपेक्षा इस वर्ष श्रीभगवन्नाम जप एवं जापकोंकी संख्यामें काफी कमी हुई है, जो शोचनीय है। भगवन्नाम-प्रेमी महानुभावोंसे प्रार्थना है कि जपकी संख्यामें विशेष उत्साह दिखलायें, जिससे भगवन्नाम-जपकी संख्यामें और वृद्धि हो सके। आशा है, अधिक उत्साहसे नाम-जप होता रहेगा।

जपकर्ताओंकी सूचना अभीतक लगातार आ रही है, किंतु विलम्बसे सूचना आनेपर उसे प्रकाशित करना सम्भव नहीं है। अतः जपकर्ताओंको जप पूरा होने (चैत्र शुक्ल पूर्णिमा)-के अनन्तर तत्काल सूचना प्रेषित करनी चाहिये, जिससे उनके जपकी संख्या प्रकाशित की जा सके।

आप महानुभावोंसे पुनः इस वर्ष पंचानबे करोड़ भगवन्नाम-मन्त्र-जपकी प्रार्थना की जा रही है। यह नाम-जप अधिक उत्साहसे करना तथा करवाना चाहिये, जिससे भगवन्नाम-जपकी संख्यामें उत्तरोत्तर वृद्धि हो।

निवेदन है कि पूर्ववत् कार्तिक शुक्ल पूर्णिमासे जप आरम्भ किया जाय और चैत्र शुक्ल पूर्णिमा (वि० सं० २०७४)-तक पूरा किया जाय। पूरे पाँच महीनेका समय है।

भगवान्के प्रभावशाली नामका जप स्त्री-पुरुष, ब्राह्मण-शूद्र सभी कर सकते हैं। इसलिये 'कल्याण' के भगवद्विश्वासी पाठक-पाठिकाओंसे हाथ जोड़कर विनयपूर्वक प्रार्थना की जाती है कि वे कृपापूर्वक सबके परम कल्याणकी भावनासे स्वयं अधिक-से-अधिक जप करें और प्रेमके

तो उसके प्रति मन्त्र-जपकी संख्या १०८ होती है, जिसमें भूल-चूकके लिये ८ मन्त्र बाद कर देनेपर गिनतीके लिये एक सौ मन्त्र रह जाते हैं। अतएव जिस दिन जो भाई-बहन मन्त्र-जप आरम्भ करें, उस दिनसे चैत्र शुक्ल पूर्णिमातकके मन्त्रोंका हिसाब इसी क्रमसे जोड़कर हमें अन्तमें सूचित करें। सूचना भेजनेवाले सज्जनोंको जपकी संख्याके साथ अपना नाम-पता, मोबाइल नम्बर स्पष्ट अक्षरोंमें लिखना चाहिये।

(८) प्रथम सूचना तो मन्त्र-जप प्रारम्भ करनेपर भेजी जाय, जिसमें चैत्र पूर्णिमातक जितनी जप-संख्याका संकल्प किया हो, उसका उल्लेख रहे और दूसरी बार जप आरम्भ करनेकी तिथिसे लेकर चैत्र पूर्णिमातक हुए कुल जपकी संख्या उल्लिखित हो।

(९) प्रथम सूचना प्राप्त होनेपर जपकर्ताको सदस्यता दी जाती है। द्वितीय सूचना भेजते समय सदस्य-संख्या अवश्य लिखनी चाहिये।

(१०) जप करनेवाले सज्जनको सूचना भेजने-भिजवानेमें इस बातका संकोच नहीं करना चाहिये कि जपकी संख्या प्रकट करनेसे उसका प्रभाव नष्ट हो जायगा। स्मरण रहे, ऐसे सामूहिक अनुष्ठान परस्पर उत्साहवृद्धिमें सहायक होकर प्रभावक बनते हैं।

(११) जापक महानुभावोंको प्रतिवर्ष श्रीभगवन्नाम-जपकी सचना अवश्य दे देनी चाहिये।

(१२) सूचना संस्कृत, हिन्दी, मराठी, मारवाड़ी, गजराती, बँगला, अंग्रेजी, उर्दूमें भेजी जा सकती है।

सूचना भेजनेका पता—
नामजप-कार्यालय, द्वारा—‘कल्याण’ सम्पादकीय विभाग.

गीताप्रेस, पो०—गीताप्रेस—२७३००५ (गोरखपुर)

राधेश

प्रार्थी—
राधेश्याम खेमका

सम्पादक—'कल्याण'

एक ही साधन सब रिद्धि-सिद्धि साधि रे । ग्रसे कलि-रोग जोग-संजम-समाधि रे ॥

भलो जो है, पोच जो है, दाहिनो जो, बाम रे । राम-नाम ही सों अंत सब ही को काम रे ॥

जग नभ-बाटिका रही है फलि फलि रे । धवाँ कैसे धौरहर देखि त न भलि रे॥

राम-नाम छाडि जो भरोसो करै और रे । तलसी परोसो त्यागि माँगै कर कौर रे ॥ [विनय-पत्रिका]

—सम्पादक

साफ-साफ अक्षरोंमें लिखना चाहिये, जिससे उनके ग्राम/नगरका शब्द नाम दिया जा सके।

कृपानुभूति

(१)

भोलेनाथकी कृपा

मेरे दामाद एक प्रतिष्ठित कम्पनीमें बड़े पदपर कार्यरत हैं। कार्यवश सालमें चार-पाँच महीने उन्हें विदेशमें रहना होता है। वे स्वभावसे बहुत ही उदार, मिलनसार और परोपकारी तो हैं ही साथ ही गणेशजीके परम भक्त भी हैं। जब वे जयपुरमें होते हैं तो हर बुधवारको जयपुरस्थित 'गढ़ गणेश' मन्दिरके दर्शन करने जरूर जाते हैं और लड्डूका प्रसाद चढ़ाते हैं। यह क्रम उनका १६-१७ सालसे चल रहा है।

अभी कुछ दिन पूर्वकी घटना है कि वे श्रीगणेशजीके दर्शनार्थ 'गढ़ गणेश' मन्दिरपर गये हुए थे। मन्दिरसे लौटते समय एक गेरुआ वस्त्रधारी, तेजस्वी आकृतिवाले महात्माने उनका रास्ता रोककर हँसते हुए कहा 'भई! पुत्रके दर्शन तो हमेशा करते हो, कभी पिताको भी स्मरण कर लिया करो'—यह कहकर उन्होंने एक डिब्बी उनके हाथमें रख दी और चले गये। उन्होंने लपककर उनके चरण-स्पर्श तो कर लिये, पर जबतक वे बातको समझते, वे जा चुके थे। आश्चर्य और कौतूहलके भावसे जब गाड़ीमें आकर उन्होंने डिब्बी खोली तो उसमें एक सुनहली चेन थी, जिसमें 'शिवजी' का पैन्डिल पड़ा हुआ था, (पैन्डिलमें शिवजी' का सुन्दर फोटो है) बादमें सर्राफको दिखलाया तो उसने बतलाया कि चेन २२ कैरिट सोनेकी है।

आजके जमानेमें कौन एक अपरिचितको यूँ सोनेकी चेन रास्ता चलते दे सकता है! ये तो प्रत्यक्ष 'शिवजी' ने उन्हें मार्गदर्शन दिया है; क्योंकि 'शिवभक्ति' के बिना तो सभी 'भक्तियाँ' अपूर्ण हैं। मेरे दामाद केवल गणेशजीको ही नमन कर रहे थे। बादमें उस जगह वे महात्माजी कभी नहीं दीखे। ये तो भोलेबाबाका बड़ा सुन्दर संकेत और भक्तके प्रति सुन्दर भाव था और भोलेनाथकी कृपा थी। अब वे गणेशजीके साथ-साथ 'भोलेनाथ' को भी स्मरण-नमन करने लगे हैं।—करुणा मिश्रा

(२)

भगवान्का अनुग्रह

लखनऊमें एक श्रीकृष्णभक्त थे श्रीसूरजप्रसादजी,

जो भगवान्के अनन्य भक्त थे। वे भगवान्के भक्तों-सन्तोंकी सेवा सर्मपण भावसे प्रेमपूर्वक किया करते थे। अखण्ड ब्रह्माण्ड-नायक प्रभुकी कृपा उनपर बरसती थी। वैश्य जातिमें जन्म पाकर भी वे वणिक्-कर्मसे अधिक महत्त्व गौ, ब्राह्मण, गंगा, गीताकी सेवामें देते थे। श्रीगीता सत्संगमें उस समय बड़े त्यागी संत, महात्मा गीता-जयन्तीपर आया करते थे। परम पूज्य करपात्रीजी, स्वामी सच्चिदानन्दजी, स्वामी नारदानन्द, स्वामी श्रीरामदेवजी महाराज (जो भयंकर सर्दी दिसम्बर-जनवरीमें भी) कमरके ऊपर कोई वस्त्र धारण नहीं करते थे, इन सबकी सेवामें ही वे भगवान्की सेवा समझते थे। उनके जीवनका सिद्धान्त था—

मन क्रम बचन कपट तजि जो कर भूसुर सेव।

मोहि समेत बिरंचि सिव बस ताकें सब देव॥

(रा०च०मा० ३।३३)

जीविकोपार्जनके लिये उनकी गणेशगंजमें एक आटा-चक्की थी, पर स्वयं वे कभी नहीं बैठते थे, केवल जाकर निरीक्षण कर लिया करते थे। एक प्रसंग सन् १९४८ ई० के आसपासका है, जब श्रीसूरजप्रसादजी परम विरक्त हो गये थे, उनकी पत्नीका शरीर शान्त हो चुका था। चक्की बन्द होनेके कगारपर थी। बिजलीका बिल चुकानेके लिये उनको कठिनता हुई तो संचयपात्र (गुल्लक) जो उनकी बड़ी पुत्री रखती थी, उसको लेकर बिजलीका बिल चुकानेहेतु वे रेजकारी निकालकर बिजली कम्पनी पहुँचे। बिजलीका बिल और धनराशि दिया, परंतु यह क्या? काउण्टरपर कैशियरने बिलपर हस्ताक्षर कर दिया और कहा कि अभी-अभी आप धन देकर गये और कहा था, बिल लेकर आता हूँ। सूरजप्रसादजी स्तब्ध हो गये, बहुत कहा कि मैं तो अभी-अभी आया हूँ, पहले आया ही नहीं, परंतु ईमानदार कैशियरने उनसे धन नहीं लिया। थोड़ी देर विचारकर वहीं खड़े रहे, फिर आर्त स्वरमें बोले—'धन्य हो प्रभु! आपने मेरे लिये इतना कष्ट उठाया। मेरा रूप धरकर आपने अनुग्रह किया।' उनके अश्रुधारा निकल पड़ी। घरपर आकर लीलाधरकी लीलासे विह्वल होकर, सब कार्य छोड़ दिया। केवल प्रभुका स्मरण, ध्यान, भजन ही उनकी दिनचर्या हो गयी। 'अनुग्रहाय भूतानाम्' स्वतः सिद्ध हो गया।—उमाशंकर

इसके बाद एक दिन जब मेरी पत्नी मुझे नाश्तेके लिये दही-चूड़ा देकर उसपर चीनी डाल ही रही थी कि हठात् मेरे आगे दो दस-दसके नोट गिर पड़े। मैंने उन्हें उठाकर कल्याण पत्रिकाके पन्नोंके बीच रख दिया। कुछ समय बाद देखा तो नोट गायब थे। पुनः शामके चार बजे मेरे आगे दस-दसके पुराने नोट गिरे। उसे उठाकर उसी समय मजदूरी लेने आये मजदूरोंको दे दिया। इसी तरह असमंजस तथा ऊहापोहके बीच समय गुजरता रहा। हाँ, इसी बीच एक जारमें करीब ५ किलो चीनी भरी मिली तथा दूसरे दिन एक दूसरे जारमें बीड़ीके करीब ५०० टुकड़े भरे मिले। रातको सोते समय पत्नी दीवालकी तरफ और मैं बाहरकी तरफ सोता। चूँकि उस उपद्रवमें कुछ कमी आ गयी थी और लड़नेकी युक्ति भी मिल गयी थी। अतः कुछ निश्चिन्त-सा हो गया था, परंतु एक रात सुप्तावस्थामें ही उस दुष्ट छायाने मेरी पत्नीको उठाकर मेरे ऊपरसे होते हुए पलंगके नीचे जमीनपर फेंक दिया। मैं उठकर पत्नी जो बेहोश थी, उसे होशमें लानेकी चेष्टा करने लगा, परंतु उसे होश नहीं आया। तब मैंने रामायण-पाठ करना शुरू कर दिया। मूर्छित अवस्थामें ही पत्नीके मुँहसे निकला—‘मैंने बहुत रामायण पढ़ी है।’ फिर मैंने हनुमानचालीसाका पाठ करना शुरू किया। बेहोशीमें ही पत्नी बोली—‘इसे पढ़ना बन्द करो, मुझे दुर्गन्ध लग रही है।’ मैंने पाठ बन्द कर दिया। कुछ देर बाद पत्नी होशमें आ गयी। अब मुझे एक दूसरा हथियार भी मिल गया था, पर मैंने सोचा इस तरह कितने दिनोंतक मुकाबला करता रहूँगा। यही सोचकर एक पहुँचे हुए साधू मौनी बाबाके पास गया, जो जमीनके अन्दर एक खोह बनाकर रहते थे। मैंने खोहमें जाकर उन्हें अपनी विपदा सुनायी। उन्होंने कहा—‘मुझे सांसारिक बातोंसे क्या लेना देना।’ इसपर मेरा प्रतिप्रश्न था ‘तो हम सांसारिक जीव कहाँ जायँ?’ इसपर उन्होंने कहा कि आपकी पत्नीको जिन्नने पकड़ लिया है। आप एक सूअर ले आइये और उसे घरमें बाँधकर रखिये। सूअरकी आवाजसे जिन्न भाग जायगा। मौनी बाबासे परामर्श लेकर मैं घर लौटा। जैसे ही

मनन करने योग्य

सुख-दुःखका साथी

काशिराजके राज्यकी बात है, एक व्याधने जहरसे बुझाया हुआ बाण हरिनोंपर चलाया। निशाना चूककर बाण एक बड़े वृक्षमें धँस गया। जहर सारे वृक्षमें फैल गया। उसके फल एवं पत्ते झड़ गये और वृक्ष सूखने लगा। उस पेड़के खोखलेमें बहुत दिनोंसे एक तोता रहता था। उसका पेड़में बड़ा प्रेम। अतः पेड़ सूखनेपर भी वह उसे छोड़कर नहीं गया था। उस धर्मात्मा और कृतज्ञ तोतेने बाहर निकलना छोड़ दिया और चुगा-पानी न मिलनेसे वह भी सूखकर काँटा हो गया। वह धर्मात्मा तोता अपने साथी वृक्षके साथ ही अपने प्राण देनेको तैयार हो गया। उसकी इस उदारता, धीरज, सुख-दुःखमें समता और त्यागवृत्तिका वातावरणपर बड़ा असर हुआ। देवराज इन्द्रका उसके प्रति आकर्षण हुआ। इन्द्र आये। तोतेने इन्द्रको पहचान लिया। तब इन्द्रने कहा—



‘प्यारे शुक! इस पेड़पर न पत्ते हैं, न कोई फल। अब कोई पक्षी भी इसपर नहीं रहता। इतना बड़ा जंगल पड़ा है, जिसमें हजारों सुन्दर फल-फूलोंसे लदे हरे-भरे वृक्ष हैं और उनमें पत्तोंसे ढके हुए रहनेके लायक बहुत खोखले भी हैं। यह वृक्ष तो अब मरनेवाला ही है। इसके

बचनेकी कोई आशा नहीं है। यह अब फल-फूल नहीं सकता। इन बातोंपर विचार करके तुम इस टूटे पेड़को छोड़कर किसी हरे-भरे वृक्षपर क्यों नहीं चले जाते?’

धर्मात्मा तोतेने सहानुभूतिकी लम्बी साँस छोड़ते हुए दीन वचन कहे—‘देवराज! मैं इसीपर जन्मा था, इसीपर पला और इसीपर अच्छे-अच्छे गुण भी सीखे। इसने सदा बच्चेके समान मेरी देख-रेख की, मुझे मीठे फल दिये और वैरियोंके आक्रमणसे बचाया। हे देवेन्द्र! इन्हीं सब कारणोंसे मेरी इस वृक्षके प्रति भक्ति है, इसीलिये मैं यहाँसे अन्यत्र जाना नहीं चाहता। ऐसी दशामें आप मेरी सद्भावनाको व्यर्थ बनानेकी चेष्टा क्यों करते हैं? आज इसकी बुरी अवस्थामें मैं इसे छोड़कर अपने सुखके लिये कहाँ चला जाऊँ? जिसके साथ सुख भोगे, उसीके साथ दुःख भी भोगूँगा। मुझे इसमें बड़ा आनन्द है। आप देवताओंके राजा होकर मुझे यह बुरी सलाह क्यों दे रहे हैं? श्रेष्ठ पुरुषोंके लिये दूसरोंपर दया करना ही महान् धर्मका सूचक है। दयाभाव श्रेष्ठ पुरुषोंको सदा ही आनन्द प्रदान करता है।* जब इसमें शक्ति थी, यह सम्पन्न था, तब तो मैंने इसका आश्रय लेकर जीवन धारण किया; आज जब यह शक्तिहीन और दीन हो गया, तब मैं इसे छोड़कर चल दूँ? यह कैसे हो सकता है।’

तोतेकी मधुर मनोहर प्रेमभरी वाणी सुनकर इन्द्रको बड़ा सुख मिला। उन्हें दया आ गयी। वे बोले—‘शुक! तुम मुझसे कोई वर माँगो।’ तोतेने कहा—‘आप वर देते हैं तो यह दीजिये कि यह मेरा प्यारा पेड़ पूर्ववत् हरा-भरा हो जाय।’ इन्द्रने अमृत बरसाकर पेड़को सींच दिया। उसमें फिरसे नयी-नयी शाखाएँ निकल आयीं, पत्ते और फल लग गये। वह पूर्ववत् श्रीसम्पन्न हो गया और वह तोता भी अपने इस आदर्श व्यवहारके कारण आयु पूरी होनेपर देवलोकको प्राप्त हुआ। [महाभारत]

— गोरक्षाका प्रश्न —

स्वतन्त्रताप्राप्तिके बाद देशमें गोरक्षाकी चर्चा किसी न किसी रूपमें निरन्तर होती रही है। गोरक्षाके दो पहलू हैं— गोरक्षण और गोसंवर्द्धन। गोरक्षणका तात्पर्य है कि देशमें गोहत्या पूर्ण रूपसे बन्द होनी चाहिये तथा गोसंवर्द्धनका मतलब है कि भारतीय देशी गायोंकी नस्ल सुधारी जाय और उनकी सम्पूर्ण प्रजातियोंका संरक्षण हो। ये दोनों कार्य सरकारके सहयोगके बिना सम्पन्न नहीं हो सकते।

अंग्रेजोंके शासनकालमें स्वाभाविक रूपसे गोरक्षापर कोई ध्यान नहीं दिया गया, परंतु आजादी मिलनेके बाद भारतकी जनताको यह आशा थी कि देशमें पूर्ण रूपसे गोहत्या बन्द होगी तथा गोसंवर्द्धन भी हो सकेगा, परंतु ये सब हुआ नहीं। कांग्रेसके शासनकालमें गोरक्षाके लिये सत्याग्रह आन्दोलन और अनशन आदि भी हुए, जिसमें आंशिक सफलता तो मिली, उत्तर भारतके कुछ राज्योंमें गोहत्या बन्द हुई, परंतु देशके कई अन्य राज्योंमें आज भी गोहत्या हो रही है।

गोहत्या-विरोधी आन्दोलनोंमें भाजपाके कार्यकर्ताओंने पूरी तरहसे भाग लिया। पूर्व सरसंघचालक आदरणीय गुरुजी श्रीगोलवलकरजीने गोरक्षा सत्याग्रहमें पूर्ण सहयोग प्रदान किया। पूर्व प्रधानमन्त्री श्रीअटलबिहारी वाजपेयीजीकी एक बार तेरह दिनोंकी सरकार बनी थी, जिसमें भाजपाकी नीतिके अनुसार संसद्में तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीशंकरदयालजी शर्माका भाषण हुआ था, जिसमें राष्ट्रपतिने भारतमें पूर्ण रूपसे गोरक्षा करनेकी भी चर्चा की थी। स्वयं अटलबिहारी वाजपेयीजीने समय-समयपर अपने भाषणोंमें गोरक्षापर विशेष रूपसे प्रकाश डाला। यद्यपि अटलबिहारीजीके नेतृत्वमें गठबन्धनकी सरकार होनेके कारण वे गोरक्षाका कार्य नहीं कर सके, परंतु वे चाहते थे कि भारतमें गोहत्याका काला कलंक समाप्त हो और गोसंवर्द्धन भी किया जाय।

वर्तमान समयमें भगवत्कृपासे भाजपाकी सरकार पूर्ण बहुमतसे बनी है। स्वाभाविक रूपमें भारतवासियोंकी यह अपेक्षा रही है कि भाजपाकी सरकार आनेपर गोहत्याका काला कलंक समाप्त हो जायगा। गोरक्षण और गोसंवर्द्धनका कार्य सरकारके सहयोगसे पूर्ण रूपसे सम्पन्न हो सकेगा।

पिछले दिनों गोरक्षाके नामपर एक-दो घटनाएँ इस प्रकारकी हुई, जो वास्तवमें शर्मसार करती हैं। इन घटनाओंसे

उन्होंने कहा कि ८० प्रतिशत लोग अपने कुकृत्योंपर पर्दा डालनेके लिये गोरक्षाकी बात करते हैं।

यद्यपि कभी-कभी अच्छे कार्योंमें भी कुछ थोड़ेसे असामाजिक तत्त्व आकर उसे बदनाम कर देते हैं। इन सबसे व्यथित होकर ही प्रधानमन्त्रीने इस प्रकारका वक्तव्य दिया होगा, परंतु यह कहना कि ८० प्रतिशत लोग ऐसा करते हैं, उचित नहीं है। समाजमें बहुत थोड़े लोग होंगे, जो गोरक्षाकी आडमें गलत कार्य करते हैं।

आज भी देशमें कई ऐसे स्थल हैं, जहाँ गोसेवा रचनात्मक रूपसे होती है। एक ऐसा भी स्थान है, जहाँ लाखोंकी संख्यामें गोसेवा हो रही है। यह सब कार्य गोभक्तोंके सहयोगसे ही सम्भव है। प्रधानमन्त्रीजीके इस प्रकारके वक्तव्यसे गोसेवाके कार्यमें शिथिलता आनी स्वाभाविक है। अतः अपने प्रधान-मन्त्रीजीको इस सम्बन्धमें पुनर्विचारकर सावधानी बरतनी चाहिये, साथ ही विपक्षीदलोंसे भी यह अनुरोध है कि अपवाद-स्वरूप घटनेवाली इन घटनाओंको राजनीतिक रंग देनेका प्रयास न करें, कारण इससे गोरक्षामें बाधा उत्पन्न होती है।

गाय हमारी अस्मिता है। गायको हम माता कहते हैं। भारतीय संस्कृतिके गऊ, गंगा, गीता और गायत्री—ये चार स्तम्भ हैं। इन चारोंको अपने शास्त्रोंमें ‘माँ’ शब्दसे सम्बोधित किया गया है। माँ अपनी सर्वोपरि श्रद्धाकी अभिव्यक्ति है। गऊमातामें सभी देवी-देवताओंका निवास है। गायकी सेवा-पूजासे सभी देवीकी पूजा-अर्चा सम्पन्न हो जाती है। हमारे कर्मानुष्ठान, यज्ञ-यागादि तथा कोई भी धार्मिक कृत्य गऊमाताके बिना सम्पन्न नहीं हो सकते। आर्थिक दृष्टिसे भी भारतमें गायका कम महत्त्व नहीं है। इन सभी बातोंको ध्यानमें रखकर सरकारको सावधान होना चाहिये और केन्द्रीय कानूनके द्वारा पूरे देशमें गोहत्या बन्द करनी चाहिये। साथ ही गोसंवर्द्धनकी दृष्टिसे गोरक्षाको प्रभावी बनानेके लिये केन्द्रीय मन्त्रिमण्डलमें एक पृथक् मन्त्रालयका गठनकर योजनाबद्ध तरीकेसे गायके लिये चरागाह, चिकित्सालय आदिकी व्यवस्था करनी चाहिये तथा निजी क्षेत्रमें इन कार्योंको करनेवाले लोगोंको प्रोत्साहन प्रदान करना चाहिये। गोरक्षा का यह महान् कार्य सरकार और जनता दोनोंके सहयोगसे ही सम्पन्न होना सम्भव है।

कल्याणके पाठकोंसे नम्र निवेदन

आगामी वर्षका कल्याण विशेषांक 'श्रीशिवमहापुराणाङ्क' [हिन्दीभाषानुवाद—प्रथम भाग, श्लोकाङ्कसहित] समयानुसार प्रेषित करनेकी चेष्टा है। वार्षिक सदस्यता शुल्क ₹२२० है। आप अपना सदस्यताशुल्क—
१-गीताप्रेसकी निम्नलिखित पुस्तक दूकानोंपर रसीद लेकर जमा कर सकते हैं।

२-ऑन लाईन—gitapress.org पर Online Magazine Subscription को click करके शुल्क जमा किया जा सकता है।

३-आप मनीआर्डर/चेक/ड्राफ्ट, कल्याण-कार्यालय, पो० गीताप्रेस, गोरखपुर भेज सकते हैं।

४-मनीआर्डरसे शुल्क भेजनेपर अलगसे भी अपना पूरा पता (पिनकोडके साथ), ग्राहक-संख्या, मोबाईल नम्बर आदि भेजना आवश्यक है।

५-यदि आपके द्वारा भेजा गया सदस्यता शुल्क १५ दिसम्बरतक हमें प्राप्त नहीं होता है तो पूर्वकी भाँति VPP से अंक आपको प्रेषित कर दिया जायेगा।

विशेष—पंचवर्षीय ग्राहक बनें।—सदस्यता शुल्क ₹११०० मात्र।

कुछ दिनोंसे अनुपलब्ध पुस्तक अब उपलब्ध

भजन-सुधा, सजिल्द (कोड 1783)—प्रस्तुत पुस्तकमें ४१९ भजनोंका अनुपम संग्रह है। इसमें गणेश, शिव, भगवान् विष्णु, भगवान् राम, श्रीकृष्ण, देवीके विभिन्न भजन तथा श्रीहनुमान्जीके भजन दिये गये हैं। प्रत्येक देवताके भजनके प्रारम्भमें संस्कृतमें उनके स्तोत्र भी संग्रहीत हैं। विभिन्न रागोंमें निबद्ध प्राचीन एवं अर्वाचीन संतों तथा मारवाड़ी भाषाके विभिन्न भजनोंका यह संग्रह सबके लिये उपयोगी है। मूल्य ₹६०

‘गीताप्रेस’ गोरखपुरकी निजी दूकानें

इन स्टेशन-स्टालोंपर कल्याणके ग्राहक बन सकते हैं

इन्दौर-452001 जी० 5, श्रीवर्धन, 4 आर. एन. टी. मार्ग
ऋषिकेश-249304 गीताभवन, पो० स्वर्गाश्रम
कटक-753009 भरतिया टावर्स, बादाम बाड़ी
कानपुर-208001 24/55, बिरहाना रोड
कोयम्बटूर-641018 गीताप्रेस मेशन, 8/1 एम, रेसकोर्स
कोलकाता-700007 गोबिन्दभवन; 151, महात्मा गाँधी रोड
गोरखपुर-273005 गीताप्रेस—पो० गीताप्रेस
चेन्नई-600010 इलेक्ट्रो हाउस, रामनाथन स्ट्रीट किलपौक
जलगाँव-425001 7, भीमसिंह मार्केट, रेलवे स्टेशनके पास
दिल्ली-110006 2609, नयी सड़क
नागपुर-440002 श्रीजी कृपा कॉम्प्लेक्स, 851, न्यू इतवारी रोड
पटना-800004 अशोकराजपथ, महिला अस्पतालके सामने
बेंगलुरु-560027 7/3, सेकेण्ड क्रॉस, लालबाग रोड
भीलवाड़ा-311001 जी 7, आकार टावर, सी ब्लॉक, गान्धीनगर
मुम्बई-400002 282, सामलदास गाँधी मार्ग (प्रिन्सेस स्ट्रीट)
राँची-834001 कार्ट सराय रोड, अपर बाजार, बिड़ला गद्दीके प्रथम तलपर
रायपुर-492009 मित्तल कॉम्प्लेक्स, गंजपारा, तेलधानी चौक (छत्तीसगढ़)
वाराणसी-221001 59/9, नीचीबाग
सूरत-395001 2016 वैभव एपार्टमेंट, भटार रोड
हरिद्वार-249401 सब्जीमण्डी, मोतीबाजार
हैदराबाद-500095 41, 4-4-1, दिलशाद प्लाजा, सुल्तान बाजार
काठमाडौं (नेपाल) पथल नं० 6,7,8, माधवराज सुमार्गी स्मृति भवन, वनकाली, पशुपति क्षेत्र।

दिल्ली (प्लेटफार्म नं० 5-6); नयी दिल्ली (नं० 14-15);
हजरत निजामुद्दीन [दिल्ली] (नं० 4-5); कोटा [राजस्थान]
(नं० 1); बीकानेर (नं० 1); गोरखपुर (नं० 1); गोण्डा
(नं० 1); कानपुर (नं० 1); लखनऊ [एन० ई० रेलवे];
वाराणसी (नं० 4-5); मुगलसराय (नं० 3-4); हरिद्वार
(नं० 1); पटना (मुख्य प्रवेशद्वार); राँची (नं० 1); धनबाद
(नं० 2-3); मुजफ्फरपुर (नं० 1); समस्तीपुर (नं० 2);
छपरा (नं० 1); सीवान (नं० 1); हावड़ा (नं० 5 तथा 18
दोनोंपर); कोलकाता (नं० 1); सियालदा मेन (नं० 8);
आसनसोल (नं० 5); कटक (नं० 1); भुवनेश्वर (नं० 1);
अहमदाबाद (नं० 2-3); राजकोट (नं० 1); जामनगर (नं० 1);
भरुच (नं० 4-5); वडोदरा (नं० 4-5); इन्दौर (नं० 5);
जबलपुर (नं० 6); औरंगाबाद [महाराष्ट्र] (नं० 1);
गोंदिया [महाराष्ट्र] (नं० 1); सिकन्दराबाद [आं० प्र०]
(नं० 1); विजयवाड़ा (नं० 6); गुवाहाटी (नं० 1);
खड़गपुर (नं० 1-2); रायपुर [छत्तीसगढ़] (नं० 1); बेंगलुरु
(नं० 1); यशवन्तपुर (नं० 6); हुबली (नं० 1-2); श्री
सत्यसाई प्रशान्ति निलयम् [दक्षिण-मध्य रेलवे] (नं० 1)।

फुटकर पुस्तक-दूकानें—चूरू-ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम, पुरानी सड़क, ऋषिकेश-मुनिकी रेती; बेरहामपुर-म्युनिसिपल मार्केट
काम्प्लेक्स, के० एन० रोड, नडियाद (गुजरात) संतराम मन्दिर, चेन्नई-12, अभिरामी माल, पुरासावलकम, निकट किलपौक/वेपेरी।



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with

By
Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!

‘कल्याण’ के पुनर्मुद्रित उपलब्ध विशेषाङ्क

कोड	पुस्तक-नाम	मू०रं	कोड	पुस्तक-नाम	मू०रं	कोड	पुस्तक-नाम	मू०रं
41	शक्ति-अङ्क	१५०	789	सं० शिवपुराण	२००	584	संक्षिप्त भविष्यपुराण	१५०
616	योगाङ्क-परिशिष्टसहित	२००	631	सं० ब्रह्मवैवर्तपुराण	२००	586	शिवोपासनाङ्क	१३०
604	साधनाङ्क	२५०	572	परलोक-पुनर्जन्माङ्क	२००	653	गोसेवा-अङ्क	१३०
1773	गो-अङ्क	१७०	517	गर्ग-संहिता	१५०	1131	कूर्मपुराण—सानुवाद	१४०
44	संक्षिप्त पद्मपुराण	२५०	1135	भगवन्नाम-महिमा और		1980	ज्योतिषतत्त्वाङ्क	१३०
539	संक्षिप्त मार्कण्डेयपुराण	९०		प्रार्थना-अङ्क	१२०	1947	भक्तमाल-अङ्क	१३०
1111	संक्षिप्त ब्रह्मपुराण	१२०	1113	नरसिंहपुराणम्-सानुवाद	१००	1189	संक्षिप्त गरुडपुराण	१६०
43	नारी-अङ्क	२४०	1432	वामनपुराण-सानुवाद	१२५	1985	लिङ्गमहापुराण-सानुवाद	२००
659	उपनिषद्-अङ्क	२००	1362	अग्निपुराण	२००	1542	भगवत्प्रेम-अङ्क-अजि०	६५
279	संक्षिप्त स्कन्दपुराण	३२५		(मूल संस्कृतका हिन्दी-अनुवाद)		1592	आरोग्य-अङ्क	
40	भक्त-चरिताङ्क	२३०	557	मत्स्यमहापुराण (सानुवाद)	२७०		(परिवर्धित संस्करण)	२००
1183	संक्षिप्त नारदपुराण	२००	657	श्रीगणेश-अङ्क	१७०	1610	देवीपुराण महाभागवत	१२०
667	संतवाणी-अङ्क	१५०	42	हनुमान-अङ्क		1793	श्रीमद्देवीभागवताङ्क (पूर्वाङ्क)	१००
587	सत्कथा-अङ्क	२००		(परिशिष्टसहित)	१५०	1842	” (उत्तरार्ध)	१००
636	तीर्थाङ्क	२००	1044	वेद-कथाङ्क (”)	१७५	1875	सेवा-अङ्क	१३०
574	संक्षिप्त योगवासिष्ठ	१६०	1361	संक्षिप्त श्रीवाराहपुराण	१००	2035	गङ्गा-अङ्क	२२०
1133	सं० श्रीमद्देवीभागवत	२४०	791	सूर्याङ्क	१३०			

अब सम्पूर्ण (छः) खण्डोंमें उपलब्ध—महाभारत (सटीक) (कोड 728)

मूल्य ₹१९५० अलग-अलग खण्ड भी उपलब्ध। प्रत्येक खण्डका मूल्य ₹३२५

गीता-दैनन्दिनी—गीता-प्रचारका एक साधन

(प्रकाशनका मुख्य उद्देश्य—नित्य गीता-पाठ एवं मनन करनेकी प्रेरणा देना।)

व्यापारिक संस्थान दीपावली/नववर्षमें इसे उपहारस्वरूप वितरित कर गीता-प्रसारमें सहयोग दे सकते हैं।

गीता-दैनन्दिनी (सन् २०१७) अब उपलब्ध—मँगवानेमें शीघ्रता करें।

पूर्वकी भाँति सभी संस्करणोंमें सुन्दर बाइंडिंग तथा सम्पूर्ण गीताका मूल-पाठ, बहुरंगे उपासनायोग्य चित्र, प्रार्थना, कल्याणकारी लेख, वर्षभरके व्रत-त्योहार, विवाह-मुहूर्त, तिथि, वार, संक्षिप्त पञ्चाङ्ग, रूलदार पृष्ठ आदि।

पुस्तकाकार—विशिष्ट संस्करण (कोड 1431)—दैनिक पाठके लिये गीता-मूल, हिन्दी-अनुवाद, मूल्य ₹ ७०**सुन्दर प्लास्टिक आवरण (कोड 503)**—गीताके मूल श्लोक एवं सूक्तियाँ मूल्य ₹ ५५**पॉकेट साइज— सुन्दर प्लास्टिक आवरण (कोड 506)**—गीता-मूल श्लोक, मूल्य ₹ ३०**अक्टूबर मासमें उपलब्धि सम्भावित—**बँगला (कोड 1489), ओड़िआ (कोड 1644),

तेलुगु (कोड 1714) पुस्तकाकार—विशिष्ट संस्करण, प्रत्येकका मूल्य ₹ ७०